ओ३म्

महर्षिदयानन्दप्रशस्तिमहाकाव्यम्

(महर्षिदयानन्दविषयक प्रशस्तिमूलक संस्कृत कविताओं का प्रतिनिधि संकलन)

—भवानीलाल भारतीय

गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

प्रथमावृत्ति	२०४३ विक्रमाब्द	मूल्य
११००	१९८७ ख्रीस्ताब्द	१०-००

[illegible]

(महर्षिदयानन्दविषयक प्रशस्तिमूलक संस्कृत
कविताओं का प्रतिनिधि संकलन)

संकलनकर्ता, सम्पादक और अनुवादक—
डा० भवानीलाल भारतीय
एम.ए, पी-एच.डी. सिद्धान्तवाचस्पति
अध्यक्ष—दयानन्द शोधपीठ
पंजाब विश्वविद्यालय, (चण्डीगढ़)
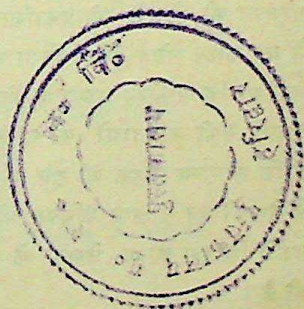
प्रकाशक—
हरयाणा साहित्य संस्थान
गुरुकुल झज्जर (रोहतक)

प्रथमावृत्ति	२०४३ विक्रमाब्द	मूल्य
११००	१९८७ ख्रीस्ताब्द	१०-००

२५.१
६६

भूमिका

लगभग बीस वर्ष पूर्व जब मैं अपने पी-एच०डी० के शोध प्रबन्ध "संस्कृत और साहित्य को आर्यसमाज की देन" पर कार्य कर रहा था, तो मेरे समक्ष ऐसी बहुत सी संस्कृत की स्फुट कविताएं आईं जो विभिन्न कवियों द्वारा पुण्यश्लोक महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व एवं कार्य की प्रशस्ति के रूप में लिखी गई थीं। तब मैंने अनुभव किया था कि महर्षि के दिव्य एवं उदात्त व्यक्तित्व और कृतित्व का मूल्यांकन इतिहासकारों ने तो किया ही है, संस्कृत के रससिद्ध कवियों ने भी उनकी पुण्यस्मृति में अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। उस समय मेरे मन में विचार आया कि इन कविताओं का संकलन एवं सम्पादन किया जाना चाहिए तथा इन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित किया जाना भी आवश्यक है। मेरे द्वारा सम्पादित ऐसी कविताओं का एक संग्रह 'महर्षि दयानन्द प्रशस्ति' शीर्षक से स्व० मोहनलाल आर्यप्रेमी अजमेर द्वारा आर्यप्रेमी के विशेषांक के रूप में १९६९ ई० में प्रकाशित हुआ था।

इसके पश्चात् विगत वर्षों में मैं अन्यान्य लेखन एवं शोध कार्यों में व्यस्त रहा किन्तु स्वामी दयानन्द की प्रशस्तिमूलक स्फुट कविताओं का एक सर्वांगीण, सुन्दर संस्करण प्रकाशित करने का विचार मेरे मन में बराबर आता रहा। जब मैंने अपना मनोभाव परोपकारिणी सभा के प्रधान तथा आर्यसमाज के तपःपूत संन्यासी स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती के सम्मुख रक्खा तो उन्होंने ऐसे ग्रन्थ को प्रकाशित करने में न केवल अपनी सहमति ही दी, अपितु हरयाणा साहित्य संस्थान की ओर से उसे प्रकाशित करने की अनुज्ञा भी प्रदान की। इसी पृष्ठभूमि में यह काव्य संग्रह तैयार किया गया। इस ग्रन्थ में इतना अवकाश एवं स्थान तो नहीं था कि साहित्य शास्त्र के निकष पर इस काव्य की विस्तृत समीक्षा की जाती, तथापि सभी कविताओं का सरल हिन्दी भावार्थ देना आवश्यक समझा गया ताकि सामान्य पाठक भी इस काव्य के रस को ग्रहण कर सकें। इन कविताओं के लेखकों का संक्षिप्त परिचय भी ग्रन्थान्त में दे दिया गया है जिससे पाठक जान सकेंगे कि इस काव्य लेखन के पीछे कवियों का श्रम एवं साधना किस कोटि की है।

अन्त में मैं इस काव्य-संग्रह को गीर्वाणवाणी के प्रेमी महानुभावों एवं महर्षि के लोकविश्रुत चरित के प्रति श्रद्धा रखनेवाले पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता हुआ आशा करता हूं कि वे सम्पादक के इस तुच्छ प्रयास को श्लाघा की दृष्टि से देखेंगे।

दयानन्द शोध पीठ,
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ।
आषाढी पूर्णिमा २०४२ वि०

विनयावनत
भवानीलाल भारतीय

अनुक्रम

पृष्ठ

मुद्रक—वेदव्रत शास्त्री,
आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक
फोन २८७४

(१) पद्य पञ्चकम्

(ओं नमो ब्रह्मणे)

लुप्तान् कालवशात् कलौ शुभकरान्धर्मांस्तु वेदोदितान् ।
व्यत्यासप्रमितैः सदर्थविततेश्चाबोधतो भूतले ॥
भूयोऽपि प्रकटय्य लोकमखिलं दुःखाम्बुधेस्तारयन् ।
व्यासो नूतन आविरास नु दयानन्दः सरस्वत्यसौ ॥१

कलि में, कालवश, मति के उल्टा होने तथा अज्ञान के कारण, भूतल में लुप्त वेद में कहे गये, कल्याणकारी धर्मों, अच्छे अर्थों को फैलाने के लिए फिर से प्रकट करके, समस्त लोक को दुःखसागर से पार उतारता हुआ क्या यह दयानन्द सरस्वती व्यास सा उत्पन्न होगया है !

सोऽयं गीष्पतिवद्वदावदमणिः क्षेत्रेषु काश्यादिषु ।
प्रापन् धर्मपथं गदन् कुधिषणान् वादोद्यतान् कुण्ठयन् ।
आहूतः सकलागमार्थविदुषा धर्मात्मना सादरम् ।
ख्यातेऽस्मिन्नजमेरनामनगरे श्रीभाग्यरामेण वै ॥२

सो काश्यादि क्षेत्रों में जाकर बृहस्पति की तरह धर्ममार्ग को कहते हुए और वाद में डटे हुए मूर्खों को पराजित करते हुए इस वदावदमणि (वाद करनेवालों में श्रेष्ठ) को, इस प्रसिद्ध अजमेर नगर में सारे वेदार्थ को जानने वाले धर्मात्मा श्री भाग्यराम (राय भागराम) ने बुलाया ।

अत्युद्दण्डशिरःसहस्रविपुलक्षोणीधरक्षोभितः ।
क्षीराब्धि प्रसरन् प्रचण्डलहरी सौहार्दसंपद्वहाम् ॥
यस्मिन् सूक्तिसुधां प्रवर्षति भवाघैश्चोग्रसूर्यांशुभिः ।
संतप्ता मुदिता सभास्थजनता तापं समस्तं जहौ ॥३

जिस समय इन स्वामी जी ने बड़ी बड़ी चोटियोंवाले पर्वतों से क्षुब्ध सागर की जल तरंगों की तरह निर्मल सूक्ति सुधा को बरसाया, उस समय संसार के पापरूपी सूर्य से जले हुए सभा के लोग प्रसन्न होकर सारे ताप को भूल गये ।

भद्र श्रीपङ्कलेपो वितरति न तथा मन्दमानन्दमन्ता
राका सम्पूर्णजैवातृककरनिकरो नानिलो दाक्षिणात्यः ॥

उद्यानं वा नवद्यं न च नमुचिभिदो नैव साक्षात्सुधा वा ।
वेदार्थं भासयन्ती भवगदमथनी यस्य वाणी यथालम् ।।४

वेदार्थों को वर्णित करनेवाली संसार के रोगों को नष्ट करनेवाली इनकी (स्वामी जी की) वाणी जैसा आनन्द देती है वैसा न तो चन्दन का लेप, न पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणें, न दक्षिण की वायु, न इन्द्र का सुन्दर उद्यान और न ही साक्षात् सुधा ही आनन्द देती है।

आधिव्याधिजरादिदुस्तरभवाम्भोधौ सदा यो दृढो—
निस्ताराय समस्तमानवकुलस्यालस्यलेशोज्झितः ।।
वर्षन् सूक्तरसं विधिः स्वयमिव श्रेयो वितन्वन् हरन् ।
सर्वाघं कृपया हरस्य जयतादाचन्द्रमार्त्तण्डभम् ।।५

आधिव्याधि जरादि रूपी दुस्तर समुद्र में नाव की तरह दृढ़, आलस्य को छोड़कर सारी मनुष्य जाति के उद्धार के लिये स्वयं ब्रह्मा की तरह सूक्ति रस को बरसाकर कल्याण करनेवाला और पापों को हरनेवाला, यह स्वामी दयानन्द, जब तक सूर्य-चन्द्र का प्रकाश है, तब तक परमात्मा की कृपा से विजयी हो।

—केरलीय शंकर शास्त्री निर्मित
तथा यमुनशंकर शर्मा द्वारा परिष्कृत

(महात्मा मुन्शीराम जिज्ञासु संगृहीत ऋषि दयानन्द का पत्र व्यवहार भाग १ से उद्धृत)

—०—

(२) श्रीमद्दयानन्दं प्रति श्रद्धाञ्जलि:

क्षोणीभाहीन्दुभिरभियुते वैक्रमे वत्सरे यः ।
प्रादुर्भूतो द्विजवरकुले दक्षिणे देशवर्ये ।।
मूलेनासौ जननविषये शंकरेणापरेण ।
ख्याति प्रापत्प्रथमवयसि प्रीतिदां सज्जनानाम् ।।१

१८८१ विक्रम संवत् में जो दक्षिण देश के एक कुलीन ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए तथा जिनका जन्म नाम मूलशंकर था, उन्होंने अपनी आयु के प्रथम चरण में सज्जनों को प्रीति देनेवाली कीर्ति एवं ख्याति प्राप्त की।

विद्याभ्यासे निखिलनिगमान्प्रापठत्सत्यमिच्छु-
वेदाङ्गानि प्रचुरविषयाण्याशु पूर्वाश्रमेण ॥
संसारेऽस्मिन्निजसुजनतां नीतिशास्त्रानुकूला-
माविष्कर्त्तुं सदुपकृतये वेदमार्गेण नूनम् ।२

जिन्होंने अपने ब्रह्मचर्य काल में ही समस्त वेदादि तथा वेदांगादि शास्त्रों का अभ्यास कर लिया था तथा जिन्होंने इस संसार में अपनी सुजनता एवं नीतिमत्ता से लोकोपकारार्थ वेदमार्ग ढूंढ़ निकाला।

देशान्देशान्बहुजनपदान् पर्वतादिप्रदेशान्
सारं सारं विविधगुणिनां यो गुणानां विचिन्वन् ।
सत्यासत्यं बहुमतजुषामीक्षितुं पर्य्यगच्छत्
प्रापत्तेषु श्रुतिपथविरुद्धाननेकान् विवादान् ।३

जो देश देशान्तरों, जनपदों तथा पार्वत्य प्रदेशों में भ्रमण कर अनेक गुणवान् व्यक्तियों से गुणों को ग्रहण करते हुए तथा अनेक मतों में विद्यमान सत्य और असत्य का निर्णय करने हेतु तथा उनमें वेदविरुद्ध वादों को उन्होंने प्राप्त किया या जाना।

सोऽयं व्योमाम्बुधिनिधिविधौ वैक्रमे वत्सरेऽस्मिन्
प्राप्ते चन्द्रक्षयतिथिकुले कार्तिके कृष्णपक्षे ।
सायंकाले सकलजनतासौख्यमापूरयन्तं
देहं त्यक्त्वा श्रुतिपदमयं ब्रह्मनिर्वाणमापत् ।।४

वही ऋषि दयानन्द विक्रम के १९४०वें वर्ष में कार्तिक अमावस्या को मंगलवार के दिन सायंकाल स्वशरीर को त्यागकर वेदोक्त ब्रह्मनिर्वाणपद को प्राप्त हुए।

यो ब्रह्मचर्यव्रतदीक्षितसद्विवेकी
पुत्रैषणादिगृहकर्मनिवृत्तचित्तः ।
संन्यासमाप सकलश्रुतिसिद्धमेव
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।५

उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत में दीक्षित होकर पुत्रैषणादि गार्हस्थ्य कर्मों से अपने चित्त को हटा लिया तथा वेदप्रसिद्ध संन्यास आश्रम को स्वीकार किया। वे ही आज शरीर को त्यागकर मोक्षधाम को प्राप्त हुए हैं।

यः पाणिनेर्मुनिवरस्य कृतेर्विभागान्
सद्यस्तदर्थगतये खलु लोकवाचा ।

व्याख्यातवान्ल्लघुमतीन् समवीक्ष्य बालान्
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।६

जिन्होंने अल्पमति बालकों के हितार्थ पाणिनिकृत व्याकरण को वेदाङ्ग-प्रकाश के रूप में विभाग कर लोकभाषा में सरस-रीति से व्याख्यात किया, वे ही स्वामी जी आज नश्वर शरीर को त्यागकर मोक्ष को प्राप्त हुए हैं।

अन्येषु वेदविषयेष्वपि भूमिकाद्याः ।
संतीह यस्य नितरां बहवो निबन्धाः ।।
शास्त्रेषु लोकविषयेष्वपि सत्यमिच्छोः
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।७

शास्त्रीय एवं लौकिक विषयों में सत्य की इच्छा करने वाले जिन महात्मा के ग्रन्य भी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि अनेक वेदविषयक ग्रंथ हैं, वे ही आज स्वर्गवासी हुए हैं।

वादानुवादभयभीतजना न यस्य,
स्थातुं समीपमशकन्नभिमानमाप्ताः ।
नानापथानुमतयो यतयोऽपि हन्त
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।८

अनेक अभिमानी लोग भी वाद विवाद करने में असमर्थ होने के कारण जिनके समक्ष ठहरने में असमर्थ रहे, नाना पथानुगामी यतिगण भी जिनके समक्ष अपने अभिमान का प्रदर्शन नहीं कर सके, वे स्वामी आज देह त्याग कर निर्वाण को प्राप्त हुए हैं।

यद्वेदवादमभिगम्य विदेशजोऽपि
वेदस्य मार्गमभिशंसति तद्विरुद्धः ।
हा हन्त हन्त विधिधर्मविधानवक्ता
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।९

जिनके वेदमार्ग को प्राप्त कर वेद-विरोधी विदेशस्थ लोगों ने भी उस वेद-मार्ग की प्रशंसा की। हा हन्त, आर्य विधि, धर्म-विधान के वक्ता, वे स्वामी दयानन्द आज दिवंगत हुए।

यस्यानुवादशरणा निजवर्णधर्मं,
त्यक्त्वा न जग्मुरपरैरपरोपदेशैः ।

आकर्षितेन मनसाऽपि परस्य धर्मं
प्राप्तोऽद्य निर्वृ त्तिपदं स विहाय देहम् ॥१०

जिनके वेदसिद्धान्त की शरण में आए जन अपने वर्ण को छोड़कर परोपदिष्ट धर्म की ओर नहीं गये, वे ही श्रीमद्दयानन्द आज निर्वाण को प्राप्त हुए हैं।

संप्रेक्ष्य यः करुणया करुणामयेन ।
हा हन्त भारतजनांश्चिरदुःखितान्नः ॥
संप्रेषितो विधिनिधिर्जगतीश्वरेण ।
प्राप्तोऽद्य निर्वृ त्तिपदं स विहाय देहम् ॥११

हम भारतवासियों को चिरकाल से दुःखी देखकर जगदीश्वर ने करुणा-पूर्वक जिन वेदनिधि स्वामी जी को संसार में भेजा था, आज वे ही शरीर को त्यागकर मोक्ष को प्राप्त हुए।

हा, लोक-शोक-तमसावृतभारतीया-
न्नुद्धरिष्यति कथं तमसः परेशः ॥
वेदोपदेशतरणिः शरणं नृणां यः।
प्राप्तोऽद्य निर्वृ त्तिपदं स विहाय देहम् ॥१२

हा, शोक के अन्धकार से आच्छन्न भारतवासियों का इस अन्धकार से परमात्मा कैसे उद्धार करेगा ? क्योंकि जो वेदोपदेशरूपी सूर्य तथा लोगों की शरणरूप स्वामी दयानन्द थे वे आज परमपद को प्राप्त हुए हैं।

संसारदुःखदलनाय समाजमार्गः ।
संस्थापितः श्रुतिपथेन समुन्नतेन ॥
येनोक्तियुक्तिभिरसत्पथखण्डनेन ।
प्राप्तोऽद्य निर्वृ त्तिपदं स विहाय देहम् ॥१३

जिन्होंने संसार के दुःखों को नष्ट करने के लिए समुन्नत वेदमार्ग से आर्य-समाज की स्थापना की तथा जिन्होंने अपनी उक्ति एवं युक्तियों के द्वारा असत् पथ का खण्डन किया। वे ऋषि आज दिवंगत हुए।

यत्पौरुषं धनमथ स्मृतिबुद्धिविद्या
यस्यान्हिकी कृतिरभूच्छ्रु ति संमतानाम् ।
भाष्ये परोपकृतये परमार्थसिद्धौ
प्राप्तोऽद्य निर्वृ त्तिपदं स विहाय देहम् ॥१४

जिनका पुरुषार्थ, धन, स्मृति, बुद्धि, विद्या तथा दैनन्दिन कार्य परोपकार हेतु था, जिन्होंने परमार्थ सिद्धि के लिए वेद सम्मत ग्रन्थों के भाष्यादि किये। वे स्वामी जी आज मुक्तिपथगामी हुए।

हा हन्त हन्त वसुधे चिरदुःखिताऽपि
प्राप्ता कथंचिदपि सौख्यमतीव कष्टात्।
वीरेण वेदविधिना बत मन्दभाग्ये
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।१५

हा हन्त, हे वसुधे, तू चिरकाल दे दुःखी थी। सो उस अत्यन्त दुःख से तुझे कथंचित् सुख की प्राप्ति उस वेदनिधान वीर पुरुष स्वामी दयानन्द से हुई थी। अब तेरे मन्दभाग्य से वही स्वामी आज स्वर्ग चले गये।

किं दुष्कृतं कृतमतिप्रसितं यतोऽत्र,
प्राप्तासि दुर्गतितरां वसुधे तथापि।
दुर्दैवमेव तव दैव-विकासितं यत्,
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।१६

हे भारत वसुंधरे, तूने ऐसा कौनसा दुष्कर्म किया जिसके कारण तेरी यह दुर्गति हुई? स्वामी दयानन्द का परलोक प्रस्थान दुर्दैवकृत दुर्भाग्य ही समझना चाहिए।

संन्यासधर्मविषयेऽपि परोपकृत्यै,
त्यक्ता दया न खलु येन सरस्वतीह।
आनन्दयुक् प्रतिपदं निजनामतोऽपि,
प्राप्तोऽद्य निर्वृत्तिपदं स विहाय देहम् ।।१७

संन्यास धर्म को स्वीकार कर लेने पर भी जिन्होंने परोपकार हेतु अपने नाम के पद 'दया' तथा 'आनन्द' युक्त 'सरस्वती' का परित्याग नहीं किया। वे ही स्वामी दयानन्द सरस्वती आज मोक्षधाम पधार गये।

नित्यानन्दी गणपतिमतं नानकीयानुदासीन्
नागा-खाखी-जिनमत-सखीभाव-सौरांश्च शाक्तान्।
दादूपन्थीगिरिपुरिभवान् भारतीयादिशैवान्
योगी हंसी प्रभृति विविधान् दण्डिपाखण्डिवर्गान् ।।१८

नित्यानन्द के अनुयायी (गौडीय वैष्णव) गणपति के उपासक, नानक के अनुयायी सिख, उदासी साधु, नागा, खाखी, जैन, सखी सम्प्रदाय के निम्बार्क

मतानुयायी, वैष्णव, सौर (सूर्यभक्त), शाक्त, दादूपंथी, गिरि, पुरी, भारती आदि दशनामी संन्यासी, योगी, हंसामत वाले, दण्डी तथा पाखण्डी साम्प्रदायिक लोग—

पल्टूदासी सुथरसधना माधवान् निर्मलान्वै
कौलान् मौनानथ चरणदासीमतं साधबौद्धान् ।
बाबालालीमतमलुकदासीमतं शून्यवादान्
कूकाकालीमतमथ हरिश्चन्द्रवृन्दावनीयान् ॥१९

पलटूदासी, सुथरे सांई, सधना (कसाई) के पन्थवाले, मध्वमार्गी (मध्वाचार्य के अनुयायी वैष्णव), निर्मले, कौल मतानुयायी वाममार्गी, मौनी मत, चरणदासी, साधपन्थी, बौद्ध बाबालाल के अनुयायी मलूकदासी, शून्यवादी बौद्ध, कूकापन्थी सिख, हरिश्चन्द्र (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र) के मतानुयायी तथा वृन्दावन निवासी वैष्णव ।

वामोवामाचरणशिवनारायणीप्राणनाथान्
मीराबाईमतमथ नखीसन्तनामीकरारीन् ।
अन्यान्धर्मव्यतिकरमतान् नूनमीसामसीयान्
देशे देशे यवनजनजान्श्रौतसिद्धान्तहीनान् ॥२०

वाममार्गी, वामाचरण (एक बंगाली सन्त) के अनुयायी, शिवनारायणी मत के अनुयायी, प्राणनाथी सम्प्रदायवाले, मीराबाई के मत को माननेवाले, नखी मत (नाखून बढ़ानेवाले), सतनामी, करारी मत तथा अन्य भी धर्मविरुद्ध मतों यथा ईसाई और यवन मतावलम्बियों के श्रौत सिद्धान्तहीन मत ।

संवीक्ष्यैषां विविधविबुधैस्तार्किभिस्तर्कवादैः
श्रौतैः स्मार्त्तैः निखिलनिगमज्ञानदैस्तद्वचोभिः ।
श्रौतं मार्गं सदुपकृतये प्रोक्तवान्यो नितान्तं
मृत्योर्मार्गं झटिति गतवान् सोऽयमाचार्यवर्यः ॥२१

इस प्रकार उपर्युक्त मत-मतान्तरों को वेदविरुद्ध देखकर इन मतों के अनुयायी, तर्कवादी विद्वानों के साथ, श्रौत, स्मार्त तथा अखिल वेद ज्ञानयुक्त वाणी से जो तर्क-वितर्क करते थे तथा जिन्होंने उत्तम पुरुषों के उपकार हेतु श्रौत मार्ग का कथन किया। वे आचार्यवर्य स्वामी दयानन्द मृत्यु के मार्ग पर झटपट चले गये ।

वेदोपदेशकरुणामृतसागरो यो,
दृष्टोऽपि दृष्टिपथतोऽयमगोचरोऽभूत् ।

नानापथातपवितप्तविचेतसोऽस्मान्
संचेतयिष्यति पुनर्निजसद्गुणैः कः ।।२२

जो वेदोपदेशरूपी करुणामृत का सागर था, जो दिखाई पड़ता हुआ भी परलोकगामी होकर दृष्टिपथ से दूर चला गया। नानामतों रूपी प्रचण्ड आतप (धूप) से व्याकुल हम लोगों को अब कौन सचेत करेगा? क्योंकि अब तक तो वे ही अपने सद्गुणों द्वारा हमें प्रबोधित करते थे।

संस्थापितो निजसभासु निराश्य सर्वा-
नस्मानयं-विधिनिधिर्यदहो विधातः।
तत्रापि धर्मविषयेऽस्ति कुतूहलं किं
कोलाहलो नवपथैरथ सम्प्रदायैः ।।२३

हे विधाता, हम सब को निराश कर तुमने जो वेदनिधि स्वामी जी को अपनी सभा में स्थापित कर लिया है, तो वहाँ भी धर्म के विषय में कौतूहल उत्पन्न हो गया है अथवा आपके वहां भी नवीन मत और सम्प्रदायवालों का कोलाहल बढ़ रहा है, जो उसकी निवृत्ति हेतु आपने स्वामी जी को परलोक में बुला लिया।

किं वा समीक्षणविधौ सुकृतस्य लोके-
ऽन्यत्रैव कुत्रचिदपि द्वयमुक्तमीश।
दृष्ट्वा नृणां हितकरः करुणामतीत्य
नादृत्य नः श्रुतिनिधिः सः समीरितो यत् ।।२४

अथवा किसी अन्य ही लोक में उक्त दोनों विषयों (धर्मविषयक जिज्ञासा तथा मत सम्प्रदायों के कोलाहल) को देखकर तूने हम लोगों की उपेक्षा कर तथा निष्करुण बनकर मनुष्य मात्र के हितकारी स्वामी जी महाराज को उत्तम कर्मों के समीक्षण हेतु भेज दिया है?

संसारसार-विरतस्य परंगतस्य,
प्रादुर्भवो भुवि तवैष नृणां दयालो।
संतारणाय दुरितोदधितः श्रुतीनां,
संचारणाय चिरमन्दगतिं गतानाम् ।।२५

हे संसार सार से विरत स्वामी जी, आपका इस भूमण्डल पर प्रादुर्भाव दुरितरूपी समुद्र से मनुष्यों का उद्धार करने हेतु तथा चिरकाल से मंदगति को प्राप्त वेदों के सम्यक् प्रचार हेतु ही हुआ था।

नानापथातपवितप्तविचेतसोऽस्मान्
संचेतयिष्यति पुनर्निजसद्गुणैः कः ।।२२

जो वेदोपदेशरूपी करुणामृत का सागर था, जो दिखाई पड़ता हुआ भी परलोकगामी होकर दृष्टिपथ से दूर चला गया। नानामतों रूपी प्रचण्ड आतप (धूप) से व्याकुल हम लोगों को अब कौन सचेत करेगा? क्योंकि अब तक तो वे ही अपने सद्गुणों द्वारा हमें प्रबोधित करते थे।

संस्थापितो निजसभासु निराश्य सर्वा-
नस्मानयं-विधिनिधिर्यदहो विधातः।
तत्रापि धर्मविषयेऽस्ति कुतूहलं किं
कोलाहलो नवपथैरथ सम्प्रदायैः ।।२३

हे विधाता, हम सब को निराश कर तुमने जो वेदनिधि स्वामी जी को अपनी सभा में स्थापित कर लिया है, तो वहाँ भी धर्म के विषय में कौतूहल उत्पन्न हो गया है अथवा आपके वहां भी नवीन मत और सम्प्रदायवालों का कोलाहल बढ़ रहा है, जो उसकी निवृत्ति हेतु आपने स्वामी जी को परलोक में बुला लिया।

किं वा समीक्षणविधौ सुकृतस्य लोके-
ऽन्यत्रैव कुत्रचिदपि द्वयमुक्तमीश।
दृष्ट्वा नृणां हितकरः करुणामतीत्य
नादृत्य नः श्रुतिनिधिः सः समीरितो यत् ।।२४

अथवा किसी अन्य ही लोक में उक्त दोनों विषयों (धर्मविषयक जिज्ञासा तथा मत सम्प्रदायों के कोलाहल) को देखकर तूने हम लोगों की उपेक्षा कर तथा निष्करुण बनकर मनुष्य मात्र के हितकारी स्वामी जी महाराज को उत्तम कर्मों के समीक्षण हेतु भेज दिया है?

संसारसार-विरतस्य परंगतस्य,
प्रादुर्भवो भुवि तवैष नृणां दयालो।
संतारणाय दुरितोदधितः श्रुतीनां,
संचारणाय चिरमन्दगतिं गतानाम् ।।२५

हे संसार सार से विरत स्वामी जी, आपका इस भूमण्डल पर प्रादुर्भाव दुरितरूपी समुद्र से मनुष्यों का उद्धार करने हेतु तथा चिरकाल से मंदगति को प्राप्त वेदों के सम्यक् प्रचार हेतु ही हुआ था।

त्यक्त्वा प्रतिश्रुतमपि श्रुतिभाष्यकर्म
यन्नैत्यकं सदुपदेशमथो विहाय।
कालेन सार्द्धमगमस्तदिदं तवैव
संयुज्यतेऽभिबलवन्नतिसाहसेन ॥२६

आप अपने प्रतिश्रुत (प्रतिज्ञापूर्वक करने योग्य) वेदभाष्यलेखन तथा उपदेशदानादि कर्म छोड़कर जो काल के साथ चले गए, यह आपके ही बल और साहस का सामर्थ्य है।

विद्योतिता सदुपदेशमयी विचिन्त्य,
दीपावली निजगमनक्षणमन्धकारम्।
नैषा भविष्यति भवद्द्युतिदा दयालो,
यद्दीपदीपनमहद्युतितां न याति ॥२७

हे दयालु महाराज, आपने अपने जाने के समय होनेवाले अन्धकार का चिन्तन कर जो यह सदुपदेशरूपी नवीन दीपावली प्रकाशित कर दी है, वह आपकी द्युति (कान्ति) के समान नहीं होगी। क्योंकि जो दीपक का प्रकाश होता है, वह सूर्य के प्रकाश की समता नहीं कर सकता।

हे श्रौतसारनिरत ! प्रसमीक्ष्य मन्दे-
ष्वस्मासु दुःसहमतीत्य निवासमत्र।
स्वस्य प्रयासमुपदेशविधौ चिराय,
प्राप्तः परं पदमनन्तसुखाय तेऽस्तु ॥२८

हे वेदसिद्धान्तनिरत स्वामी दयानन्द, हम जैसे मन्दधी लोगों में अपने निवास को कष्ट समझकर तथा हमें उपदेश देने में अतिकाल तक होनेवाले परिश्रम को त्यागकर आप जो परमपद प्राप्त हुए हैं, वह पद आपके लिए सुखदायक होवे।

नानादेशनिवासिभिर्बहुजनैर्नानापमानं मुहुः,
सम्प्राप्याखिललोक-सौख्यनिरतो वेदं निवेद्याधुना।
लोकेभ्यः सदसद्विवेकमतुलं विस्तार्य संधार्य च,
प्रेमास्पद्यमथो जनेषु नितरां प्राप्तः पदं शाश्वतम् ॥२९

आपने अखिललोक के सुख की वृद्धि हेतु, नाना देश निवासी बहुत से लोगों से मानापमान प्राप्त किया, उन्हें वेद का उपदेश देकर लोगों को सद्-असद् विवेक

का बोध कराते तथा उनमें प्रेम व। दिरता: कराते हुए ही आप शाश्वत पद को प्राप्त हुए हैं।

यया दत्तमन्त्यं पुरोर्द्धेन मध्यं सुबद्धं
तदर्द्धेन नान्यः परो मित् ।
सरोग्रे सरश्चाद्य सत्तार्थरक्तस्त्रियोक्त:
कनोनो नरेऽस्तं गतोऽसौ ॥३०

यह कूट पद है। जिस दयानन्द ने निज अर्द्धभाग से अन्त्याक्षर और पूर्वाक्षर का ग्रहण किया तथा उसके मध्य भाग को अपने आधे भाग में बांधा। अर्थात् मध्य को परिपूर्ण न किया तो भी उत्तमता से उसको अपने वश में किया। उस समुदाय से और आगे नकार तथा इत् जिसका ऐसा नुम् का नकार है, इस 'दयानन्द' समुदाय से अग्रगामी, सत्तार्थक, प्रथम तद्धित अर्थात् मतुप् प्रत्यय में रमा हुआ, स्त्रीलिंग से युक्त सरस शब्द है। यह दयानन्द सरस्वती समुदाय मनुष्य अर्थ में कन् प्रत्यय से ऊन, जिस मनुष्य (व्यक्ति) का वाचक था, वह व्यक्ति अस्त को प्राप्त हुआ।

अज्ञानजन्य-तिमिरव्रजनाशको यो,
वेदोपदेशकदिनद्युतिरस्तमापत् ।
तच्छोकमार्यगण ! कः कथितुं समर्थो,
धैर्यं विधेयमवलम्ब्य तदुक्तियुक्ती: ॥३१

हे आर्यगण, अज्ञानजन्य अन्धकार के समूह के नाशक जो वेदोपदेशक सूर्य के तुल्य स्वामी जी थे, वे अस्ताचल को प्राप्त हुए। उनके निधनजन्यशोक को कौन कहने में समर्थ है? अतः उनकी युक्तियों एवं उक्तियों का अवलम्बन कर हमें धैर्य ही धारण करना चाहिए।

—पं० ज्वालादत्त शर्मा
(दयानन्द दिग्विजयार्क तथा अन्य अनेक ग्रंथों में उद्धृत)

—०—

(३) संस्कृतपद्यकुसुमाञ्जलिः

अहो नितान्तं हृदयं विदूयते निशम्य लोकान्तरमुन्नताशयम् ।
सम्प्रस्थितं वेदविदामनुत्तमं श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीं कविम् ॥१

अहा, वेदों के जाननेवालों में सर्वोत्तम, मेधावी तथा उन्नताशय दयानन्द सरस्वती के लोकान्तर गमन को सुनकर हृदय को अत्यन्त दुःख होता है ।

दीपपंक्तिचितभूतले सति व्योम्नि तारकगणैस्समुज्ज्वले ।
शोकजालतिमिराकुले तु सत्युत्ससर्ज स शरीरबंधनम् ॥२

पृथ्वी पर दीपकों की पंक्ति के जलने पर, तारागणों से आकाश के प्रकाशित होने पर और शोकरूपी अन्धकार के फैलने पर उन्होंने शरीर के बन्धन को छोड़ दिया ।

निःशेषपीताखिलशास्त्रसारः पूतान्तरात्मा निगमाग्निजालैः ।
ज्ञानोत्तमैकाञ्जनलिप्तनेत्रो ब्रह्मैकनिध्यानविशुद्धचेताः ॥३

स्वकीयदेशोन्नतिमात्रलग्नः स्वप्नेऽपि न प्रापि निजार्थबुद्धिः ।
त्यक्त्वा समस्तं तु कथन्नु कार्यं गन्तुं द्युलोकं स मनश्चकार ॥४

जिसने शास्त्रों के समस्त सार का पान कर लिया था, वेद की अग्नि से जिसका अन्तरात्मा पवित्र होगया था, जिसने अपने नेत्रों में उत्तम ज्ञान का अञ्जन लगाया था, जिसका चित्त ब्रह्म का ध्यान करने से पवित्र हो गया था, जो अपने देश की उन्नति में सदा संलग्न था, स्वप्न में भी जिसने स्वार्थ चिन्तन नहीं किया, उसने इस सब कार्य को छोड़कर द्युलोक जाने का विचार क्यों किया ?

विज्ञाय तस्याद्भुतचारुवृत्तं दिवौकसो जातकुतूहलाः किम् ।
तद्दर्शनायात्मनिकेतनं तमजूहवन्दिव्यगुणैरुपेतम् ॥५

क्या कहीं स्वर्ग के देवताओं ने उसके अद्भुत और सुन्दर चरित्र को सुनकर कुतूहलवश उस दिव्य गुणों से युक्त पुरुष को अपने गृह पर दर्शन करने के लिए तो नहीं बुला लिया ?

कृतयुगोचित एष जनः किल न चिरमर्हति वस्तुमसौ मयि ।
मनसि संकलितकलिनेति किं, स च हृतोऽखिलसाधुमनोरथैः ॥६

क्या कहीं कलियुग ने यह सोचकर कि यह पुरुष सतयुग के उपयुक्त गुणों से युक्त है और अधिक काल तक मुझ में रहने के योग्य नहीं है, सब अशुभ मनोरथों से तो उसे नहीं हर लिया ?

गुणानपेक्षेण निजप्रभुत्वं कालेन किं दर्शयितुं हृतः सः ।
नृदेहभाक् प्राक्तनकर्मयोगात् पुनः प्रपन्नः प्रकृतिं निजां वा ।।७

क्या कहीं काल ने, जो गुणों की अपेक्षा नहीं करता, अपना प्रभुत्व दिखाने के लिए तो उसे नहीं हर लिया ? क्या वह अपने पूर्वककालीन कर्मों के योग से मनुष्य शरीर को पाकर फिर अपनी प्रकृति को प्राप्त नहीं हो गया ?

संदेहदोलामधिरूढमेवं मनो न निश्चेतुमलं मदीयम् ।
चित्रं निगूढ़ं चरितं विधातुर्वेत्तुं क्षमः को वद मानुषोऽस्ति ।।८

इस प्रकार सन्देह के हिंडोले पर आरूढ़ मेरा मन कुछ भी निश्चय नहीं कर सकता । विधाता का चरित्र विचित्र और अत्यन्त गूढ़ है, उसे जानने को कौन मनुष्य समर्थ है ?

दिनानि पूर्वं कतिचिद्य आसीदसंहतास्मन्नयनोत्सवाय ।
स्मृतेस्स पन्थानमितोऽधुना तत् कथं विधेः स्याल्लसितं प्रमेयम् ।।९

कुछ दिन पूर्व तक जो हमारे नेत्रों को आनन्द देनेवाला था, वह अब यहाँ से स्मृति के पथ में पहुंच गया । विधाता की इच्छा क्योंकर जानी जा सकती है ।

तातगेहवसतिर्विमानिता संश्रितश्चरम एव चाश्रमः ।
धर्मतत्त्वपरिबोधने रतस्तेन सोढमपि दुर्वचो नृणाम् ।।१०

उसने पिता के घर की अवहेलना करके संन्यासाश्रम का आश्रय लिया, वह धर्म के तत्त्व को जानने में लगा रहा, उसने मनुष्यों के दुर्वचनों को भी सहन किया ।

स्वं विहाय मुहुरुच्छ्रितं पदं वारिदः श्रयति वाहिनी-तटम् ।
केवलं पर-हिते कृतश्रमा लाघवं न गणयन्ति सज्जनाः ।।११

जैसे मेघ अपने ऊंचे पद को छोड़कर बार-बार नदी तट का आश्रय लेता है ऐसे ही परहित के लिए परिश्रम करनेवाले सज्जन अपने अपमान का विचार नहीं करते ।

यः पाखण्डमतैक-खण्डनरतो वेदाख्यशस्त्रैः शुभैः;
शास्त्राणां बलवद्बलेन सततं संसेव्यमानो युधि ।

सत्पक्षः परिषच्छलेन विजयस्तम्भान्समारोपय-
द्दिक्ष्वन्यः पुरुषो हि तेन सदृशो लभ्येत कुत्राधुना ॥१२

जो वेद नामवाले शुभ शस्त्रों से पाखण्डमतों के खण्डन में निरन्तर लगा हुआ था, युद्ध में शास्त्रों की बलवती सेना जिसकी सेवा करती थी, जिसने सत्पक्ष और सभाओं के मिस से दिशाओं में विजयस्तम्भ स्थापित किये थे। अब उसके समान पुरुष कहां मिल सकता है।

एक एव खलु पद्मिनीपतिरेक एव दिवि शीतदीधितिः।
एक एव च स वेदविद्भुवि द्विजत्वमत्र न कदा श्रुतं मया ॥१३

कमलिनी का पति सूर्य एक ही है, आकाश में चन्द्रमा भी एक ही है। ऐसे ही पृथ्वी पर वेदज्ञों में वह अकेला ही था, मैंने इस विषय में दूसरे का अस्तित्व कभी नहीं सुना।

स्यात्पुनस्तरणिरक्षिगोचरो दृश्यते नभसि चन्द्रमाः पुनः।
यात एष तु सकृत्सदग्रणीर्बोभवीति विषयो न नेत्रयोः ॥१४

सूर्य भी पुनः दृष्टिगोचर होता है, आकाश में चन्द्रमा फिर दिखाई देता है, किन्तु सत्पुरुषों में अग्रणी यह महापुरुष एक बार जाकर पुनः नेत्रों का विषय नहीं बनेगा।

इन्द्रियार्थोद्भवं ज्ञानं सर्वथा न प्रमात्मकम्।
तच्च्युतः स महात्माऽतः स्मृतावेव निधीयताम् ॥१५

इन्द्रियों और अर्थों से उत्पन्न ज्ञान सर्वथा प्रामाणिक नहीं होता। इसलिए वह महात्मा उससे पृथक् होगया। अब उसे स्मृति में ही रखना होगा।

संस्कृता भारती येन वृद्धिं यायाद् भारतम्।
तस्य नामामरं च स्यादित्येतद् व्यवसीयताम् ॥१६

जिससे संस्कृत भाषा निरन्तर वृद्धि को प्राप्त हो और उसका नाम अमर हो, ऐसा यत्न करना चाहिए।

ऋषयः कवयो नष्टा विद्वांसोऽपि तथैव च।
साधूनां मरणात् पश्चादभिधानं तु जीवति ॥१७

ऋषि, कवि और विद्वान् सब लुप्त होगए, साधुओं की मृत्यु के पश्चात् उनका नाम ही जीवित रहता है।

को नाम श्रीदयानन्दात्साधीयान्दृश्यते जनः।
उज्जीवितार्षविद्या येनास्माभिर्निरपेक्षिता ॥१८

श्री दयानन्द के समान साधु पुरुष कौन दीखता है, जिसने हमसे उपेक्षा की गई, आर्ष विद्या को पुनरुज्जीवित किया।

संवेषा नीयतां पुष्टि स्वकीयहितवृद्धये ।
शास्त्रतत्त्वावबोधेन यूनां संक्रियतां च धीः ॥१९

उस आर्ष विद्या की अपने हित की वृद्धि के लिए पुष्टि करो, शास्त्र के तत्त्वज्ञान से युवकों की बुद्धि संस्कृत करो।

अन्तर्लापिका

कः पद्मिनीनां वद तिग्मदीधिति-
धर्मः परः कः, कविवाचि कः स्थितः ।
का कण्ठभूषा, न यमाद् बिभेति कः,
स्वामी दयानन्द-सरस्वती यमी ॥२०

सूर्य पद्मिनी का कौन है ? परम धर्म कौनसा है ? कवि की वाणी में कौन स्थित है ? कण्ठ का भूषण क्या है ? यम से कौन नहीं डरता ? उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर हैं—स्वामी, दया, आनन्द, सरस्वती, यमी।

—वै० रामदास छबीलदास वर्मा
स्वामी दयानन्द के जीवनचरितों में उद्धृत

—०—

(४) यतिवरं प्रणमामि

(शिखरिणी छन्द)

यतो धर्मग्लानिर्भवति किल कश्चिदिह यदा,
तदुद्धर्त्तुं मुक्तोऽवतरति तदेति श्रुतमिदम् ।
चिराल्लुप्तं लोके श्रुतिमतमतः स्थापितुमभूद्,
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी यतिवरः ॥

जब धर्म का नाश होता है तब उसके उद्धार के लिये ईश्वर की कृपा से कोई मुक्त पुरुष उत्पन्न हो जाता है। इस भारत में चिरकाल से वैदिक मत

लुप्त हो रहा था। उसे पुनः स्थापित करने के लिए वेदपथगामी यतिवर स्वामी दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ।

(द्रुतवलम्बित छन्द)

सकललोकहितैषणयेरितः
निगमभाष्यकृतावयतिष्ठ यः।
जगति चार्यसमाजविधायको
यतिवरं प्रवरं प्रणमामि तम्॥

सकल लोक के हित के लिये वेदभाष्य करनेवाले और जगत् में आर्यसमाज के संस्थापक यतिवर दयानन्द को हमारा प्रणाम है।

सुखमसूनयति संत्यजति यो,
न पुनरात्मकृतं वरमुत्तमम्।
सकललोकहिताङ्कतया धिया,
यतिवरं प्रवरं प्रणमामि तम्॥

जिस महात्मा ने लोकोपकार के लिए अपने प्राणों को सुखपूर्वक छोड़ दिया किन्तु अपने सत्यव्रत को नहीं छोड़ा। ऐसे यतियों में श्रेष्ठ तपस्वी को हमारा प्रणाम है।

—पं० हनुमानप्रसाद मिश्र
—भारतसुदशा प्रवर्त्तक में प्रकाशित

०——०

(५) अथ विनयाष्टकम्

श्रीस्पर्शनाच्छास्त्रगतागतीनां तमस्तमच्छन्नरुचां मतीनाम्।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम्॥१

शास्त्रों के ज्ञान में प्रवृत्तिरहित, तमोगुण रूप अन्धकार से आच्छादित बुद्धियों को विज्ञान देने के हेतु श्रीमान् दयानन्द सरस्वती के वचन अतिशय जय को प्राप्त हों।

परापराविदनवाक्पतीनां सद्वेदवादात्तयशस्ततीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥२

परा और अपरा विद्याओं में बृहस्पति के तुल्य तथा जिन्होंने वेदविद्या के अध्ययन के द्वारा प्रशस्त यश प्राप्त किया है, ऐसे स्वामी दयानन्द के वचन अतिशय जय को प्राप्त हों ।

वैशेषिकाशिषितहृद्रतीनामशेषशेषाशयसाद्रतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥३

वैशेषिक शास्त्र के समस्त आशय को जानने में प्रीतियुक्त और शेष अर्थात् महर्षि पतञ्जलिकृत महाभाष्य के अभिप्राय को जानने में पूर्ण समर्थ दयानन्द सरस्वती के वचन अतिशय विजय प्राप्त करें ।

सांख्यज्ञसंख्याविदुषां नतीनां भुवां भवेऽभव्यमिदां सतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥४

सांख्य शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों द्वारा नमस्कार के पात्र तथा दुराचार के विनाशक स्वामी दयानन्द सरस्वती की वाणी अत्यन्त विजय प्राप्त करे ।

पाखण्डिपाखण्डतमोघुतीनां सुधर्मरक्षाविलसद्द्युतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥५

पाखण्डियों के पाखण्डरूप अन्धकार को दूर करनेवाले तथा वेदविहित सुधर्म की रक्षा करने से जिनकी दीप्ति अत्यन्त शोभायुक्त है, ऐसे दयानन्द सरस्वती की वाणी अतिशय जय प्राप्त करे ।

मूर्त्यर्चकानां गुरुसंहतीनामबाधविध्वंसनभारतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥६

मूर्तिपूजक लोगों के बहुत से समूहों के अज्ञान को नष्ट करने में सरस्वती के तुल्य दयानन्द सरस्वती की वाणी जय को प्राप्त होवे ।

याथार्थ्यमुद्बोधयतां कृतीनां श्रुतिस्मृतीनां महतां सृतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥७

विद्वानों के समक्ष महापुरुषों के मार्गभूत वेदों तथा स्मृतियों के यथार्थ तत्त्व को प्रकट करनेवाले, स्वामी दयानन्द सरस्वती के वचन अतिशय जय को प्राप्त होवें ।

याचध्वमार्या अथ शाश्वतीनां कार्यं समानां विषयादतीनाम् ।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ।। ८

हे आर्यो, भगवान् से प्रार्थना करो कि विषयों से विरक्त स्वामी दयानन्द सरस्वती के धर्म कार्य बहुत वर्ष पर्यन्त संसार में स्थिर रहें तथा उनकी वाणी सर्वकाल में विजय प्राप्त करे ।

—पं० सत्यव्रत शर्मा

स्वामी दयानन्द के जीवन चरित से उद्धृत

o——o

(६) दयानन्दस्तुतिः

वेदाभ्यासपरायणो मुनिवरो वेदैकमार्गे रतः ।
नाम्ना यस्य दया विभाति निखिला तत्रैव यो मोदते ।
येनाम्नायपयोनिधेर्मथनतः सत्यं परं दर्शितम् ।
लब्धं तत्पदपद्मयुग्ममनघं पुण्यैरनन्तैर्मया ।।

वेदाभ्यास परायण मुनिवर जो एकमात्र वेदमार्ग पर ही चलते थे, जिनके नाम में 'दया' सुशोभित थी तथा जो उसी में आनन्द प्राप्त करते थे, जिन्होंने वेदरूपी समुद्र का मथन कर परम सत्य को दिखाया, मैंने अपने अनन्त पुण्यों से उन्हीं स्वामी दयानन्द के युगल पादपद्मों को प्राप्त किया है ।

प्रामाण्यं निगमस्य येन कथितं मिथ्यावचः खण्डितम् ।
सत्यासत्यवचोविरोधमनने यस्य प्रमाणं वचः ।
सर्वं वेदवचो विचार्य मननं यस्मिन्मते दृश्यते ।
तं वन्दे गुरुं वैदिकं मुनिरहं श्रौतप्रमाणप्रियम् ।।

जिन्होंने वेदों के प्रमाण का कथन किया तथा मिथ्या बातों का खण्डन किया, जिनके प्रामाणिक वचन सत्यासत्य का विचार करने में सदा प्रमाण हैं, जिनके मत में वेदवाणी का विचारपूर्वक मनन लक्षित होता है, उन वेदों के प्रमाण को माननेवाले वैदिक गुरु दयानन्द की मैं आर्यमुनि वन्दना करता हूं ।

—महामहोपाध्याय पं० आर्यमुनि

—आर्य मन्तव्यप्रकाश से उद्धृत

o——o

(७) श्रीमद्दयानन्दाष्टकम्

समाश्रित्यार्या यं शमितसमदैन्यं शमवतां
सतां निःशेषाशानिचयपरिपूर्तौ कुशलिनः।
प्रजायन्ते चान्तेऽमृतरसभुजस्तत्रभवतः
परेशस्याध्येयं चरणयुगलं तस्य विमलम्॥

जिस परेश परमात्मा का आश्रय लेकर आर्य लोग अपनी दीनता को दूर करते हैं, जो श्रेष्ठ पुरुषों की सम्पूर्ण आशाओं को पूर्ण करनेवाला है, जिससे देवता लोग उत्पन्न होते हैं उस परम पिता के निर्मल चरणयुगलों का हम ध्यान करते हैं।

परेशस्य ध्याता कुमतविसरध्वान्तस्वमणिः
सुवर्णी संसारोद्धृतिकृतिकृती धर्मनिरतिः।
अनुष्ठाता नानोत्तमतरविधीनां शुभमतिः
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते॥ २

जो परमात्मा का ध्यान करनेवाला, दुष्टमतों रूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्यतुल्य था, जो संसार का उद्धार करनेवाला परिव्राजक, धर्म में विरत तथा विभिन्न उत्तम विधियों का अनुष्ठानकर्ता एवं शुभ बुद्धि वाला था। वेद के मार्ग पर चलनेवाले उस स्वामी दयानन्द की विजय हो।

सदाचारं त्यक्त्वा सरलमतयो ये विविहताः
परान्तेवासित्वं समुपगतवन्तो बत जनाः।
तदुद्धारे येन प्रयतितमुदारेण सुमहान्
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते॥ ३

जो सरलमति लोग सदाचार का त्याग कर दुर्भाग्य के मारे विनाश के मार्ग की ओर जा रहे थे, उनका उद्धार करने का जिस महान् एवं उदार व्यक्ति ने घोर प्रयत्न किया, उस वेदपथगामी स्वामी दयानन्द की सदा विजय हो।

गवां रक्षाकर्ता स्थविरशिशुपाणिग्रहविधेः
समुन्नेता योऽभूत्पतितजनताया अपि भृशम्।
निरोद्धा दीनानामवनविधिदीक्षः सनियमः
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते॥ ४

जो गायों का रक्षक तथा वृद्ध एवं बालकों के विवाह का निषेध करता था,

जो पतितजनों की उन्नति की निश्चित कामना करनेवाला था, जो दीनों का रक्षक था, उस स्वामी दयानन्द की सदा विजय हो।

स्वभाषाया विज्ञः समुचिततरोन्नतिकरणे
प्रवृत्तो यो योगी विहितविविधग्रन्थरचनः।
स्वदेशीयं वस्तु प्रति विततरागः समभवद्
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते ॥ ५

जो अपनी भाषा की उन्नति करने में सदा तत्पर रहा, जो योगी विविध ग्रन्थों की रचना में प्रवृत्त रहा तथा जिसने प्रत्येक स्वदेशी वस्तु के प्रति अनुराग उत्पन्न किया, उस श्रुतिपथगामी दयानन्द की सदा विजय हो।

विनिन्द्याचाराणां कुचरिततमोमोहपटली-
विनाशव्यासक्तः प्रबलतरसंविद्रुचिधरः।
निजस्थित्या योऽसौ निखिलधरणीमोदजनको-
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते ॥ ६

जो निन्दित आचरणों तथा दुश्चरित्ररूपी अन्धकार एवं मोहरूपी आवरण को नष्ट करने में सदा लगा रहा, जो अपनी स्थिति से सम्पूर्ण धरातल के लोगों को प्रमुदित करता रहा, उस स्वामी दयानन्द की सदा विजय हो।

अये मातर्भागा भरतधरणि त्वं प्रतिभयं
त्वदुद्धारे प्राणानपि परिहरेयं सुखमहम्।
इतीवोच्चैर्घोषं व्यधित करुणापूर्णहृदयो
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते ॥ ७

अयि अभागिनी भारतमाता, तेरा उद्धार करने के लिए ही जिसने सुखपूर्वक अपने प्राणों का भी परित्याग कर दिया, जो करुणापूर्ण हृदय होकर तेरे दुःखों को दूर करने में तत्पर था, उस स्वामी दयानन्द की विजय हो।

शरद्राकानाथद्युतिरपि परोत्तापनकरः
परः साधूनां यो भुवनहितसम्पादनपरः।
यशोराशिं त्यक्त्वा दिवमितः इतः कौमुदमहे
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी भवतु नः ॥ ८

जिसकी शरद् पूर्णिमा के चन्द्रमा के तुल्य द्युति भी शत्रुवर्ग के लिए तापकारी थी, परन्तु जो साधु पुरुषों के लिए लोकहित सम्पादनकारी था। वे स्वामी

दयानन्द हमारे लिये निगमपथगामी होवें ।

पं० दिलीपदत्त शर्मोपाध्याय
संस्कृत अध्यापक, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर
आर्यमित्र के दयानन्द जन्मशताब्दी विशेषांक में प्रकाशित

o——o

(८) यतिपञ्चकम्

तिरस्कर्ता नानामततिमिरराशेः द्रुततरम् ।
परिष्कर्ता वेदस्मृतिविहितमार्गस्य मतिमान् ।।
सुसंस्कर्ता चेतश्चरितजलसेकाञ्जनिमताम् ।
दयानन्दो भानुर्भजतु भुवने भूय उदयम् ।। १

अनेक मत मतान्तररूपी अन्धकार की राशि को शीघ्र ही नष्ट करनेवाला, वेद तथा स्मृतिविहित मार्ग का परिष्कारकर्त्ता, अपने चरितरूपी जल से लोगों के हृदय को शुद्ध करनेवाला, दयानन्दरूपी सूर्य लोक में पुनः उदित होवे ।

विपत्सिन्धोः सेतुः श्रुतिविततिहेतुर्निगमवित् ।
दयाकेतुः पेतुश्चरणनलिने यस्य कृतिनः ।।
निरीहो योगेशो भुवि तततमिस्रां व्यपनयन् ।
दयानन्दो भानुर्भजतु भुवने भूय उदयम् ।। २

जो विपत्तिरूपी सागर को पार करने के लिये सेतु तुल्य था, जो दया की ध्वजा के समान था, जिसके चरणकमलों का लोग आश्रय लेते थे, जो इच्छारहित योग का स्वामी था तथा जिसने संसार के अन्धकार को दूर किया, वह दयानन्द रूपी सूर्य संसार में पुनः उदित होवे ।

वदान्यो धन्यो यो दलितजनतोत्तारणतरिः ।
समुत्साहव्यूहं जनपदपदेष्वारचितवान् ।
मुनीन्द्रो भक्तेन्द्रः प्रतिभटगजेन्द्रः सयतवाक् ।
दयानन्दो भानुर्भजतु भुवने भूय उदयम् ।। ३

जो उदार, धन्य तथा दलितजनों के उद्धार हेतु पोत (नौका) के तुल्य था । जिसने लोगों के पैरों में उत्साहरूपी व्यूह तैयार किया । वह मुनीन्द्र, भक्त

शिरोमणि तथा अपने प्रतिद्वन्द्वियों के लिये हाथी के तुल्य था। ऐसा दयानन्द रूपी भानु पुनः उदय होवे।

अनेके भूपाला निखिलतटचुम्ब्यञ्जलिपुटाः।
सपर्या पर्यायेक्षणविरतचित्ता यमभजन्॥
सदाचारो भक्तः शमदमरतः साध्वसहतः।
दयानन्दो भानुर्भजतु भुवने भूय उदयम्॥ ३

अनेक राजा लोग अञ्जलिबद्ध हो जिनकी सेवा में दत्तचित्त लगे रहते थे, जो सदाचारी, भक्त, शम एवं दम से युक्त तथा भयरहित था। वह दयानन्दरूपी भानु संसार में पुनः उदित होवे।

न्यधित धीरवीरो धियमीश्वरे।
धृतिधनो निधनं व्यधितात्मनः॥
व्यधित यः श्रुतिदुन्दुभिनिस्वन-
न्नमत तं मुनिवर्यमनारतम्॥ ५

जिस धैर्यशाली महानुभाव ने अपनी बुद्धि को परमेश्वर में लगाया था, धैर्य ही जिसका धन था तथा जिसने अपनी मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की। जिसने वेदरूपी दुन्दुभि को तार स्वर से गुंजाया। उस मुनिवर दयानन्द को हमारा सतत प्रणाम होवे।

पं० हरिदत्त शास्त्री
—आर्यमित्र दयानन्द जन्म शताब्दी अंक में प्रकाशित

०——०

(६) स्फुट पद्य

(१)

सुखकरबलराशिं हेमकूटाभकायम्
कुटिलजनवनाग्निं पण्डितानां महेशम्।
सकलशुभनिकायं योगिनामग्रगण्यं
भवपतिवरदासं कार्षणिं तं नतोऽस्मि॥

जो सुख देनेवाले हैं, बल के भण्डार हैं, जिनकी देह हेमकूट पर्वत के तुल्य आभावाली है, जो दुष्टजन रूप वन को जलाने के लिये अग्नितुल्य हैं, जो

पण्डितों के स्वामी हैं, सकल शुभ के भण्डार हैं तथा योगियों में अग्रगण्य हैं ऐसे परमात्मा के श्रेष्ठ सेवक करसन जी के पुत्र दयानन्द को मैं नमस्कार करता हूं।

—पं० लोकनाथ तर्कवाचस्पति

(२)

नामावशेषान्भुवि लुप्तवेदान्
भूयः समुद्धर्तुमनल्पयत्नम्।
श्रीमद्दयानन्दसरस्वती य-
श्चक्रे महर्षिं तमहं प्रणौमि॥

जो वेद धरती से लुप्त हो चुके थे, जिनका नाम ही अवशिष्ट रह गया था, उन वेदों का स्वल्प यत्न से ही जिन्होंने उद्धार किया तथा उनका यश फैलाया, ऐसे महर्षि दयानन्द को मैं प्रणाम करता हूं।

--पं० शुक्रराज शास्त्री

(३)

धन्यञ्च प्राज्ञमूर्धन्यं दयानन्दं दयाधनम्।
स्वामिनं तमहं वन्दे वारं वारं च सादरम्॥

वे दयारूपी धनवाले दयानन्द जो बुद्धिमानों में अग्रगण्य हैं, धन्य हैं। मैं उन स्वामी जी को बार-बार सादर नमस्कार करता हूं।

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी

०——०

(१०) दयानन्द-प्रशस्तिः

अपारपाण्डित्यपयोधिमन्दिरं यशश्छटाच्छन्नचतुर्दिगन्तरम्।
समग्रविद्वज्जनवृन्दकुञ्जरं स्तुमो दयानन्दसरस्वतीं कविम्। १॥

महापाण्डित्य के अपार सागर, अपनी कीर्ति ज्योति से चारों दिशाओं को परिपूर्ण करदेनेवाले और समस्त विद्वज्जनों में श्रेष्ठ महापण्डित श्री स्वामी दयानन्द जी की हम प्रशंसा करते हैं।

यत्स्वादाद् विरसा भवन्ति विभवास्त्रैलोक्यराज्यादयो,
बोधो वैदिक एक एव परमो नित्यः समुज्जृम्भते।

भो लोकाः क्षणभङ्गुरे तदितरे भोगे रतिस्त्यज्यताम्,
इत्येवं प्रणुमो वदन्तमनिशं श्रीमद्दयानन्दकम् ॥ २ ॥

"जिसके स्वाद के आगे 'त्रिलोकी राज्य' आदि के ऐश्वर्य भी फीके प्रतीत होते हैं वह वैदिक ज्ञान ही एकमात्र सर्वश्रेष्ठ और नित्य है। हे लोगो ! आप लोग उस वैदिकज्ञानास्वाद से भिन्न क्षणिक सांसारिक भोगों में प्रीति मत कीजिये" इस प्रकार जो अहर्निश उपदेश करते थे उन दयानन्द महाराज के प्रति हम नतमस्तक हैं।

वादिप्रौढतमिस्रखण्डनविधौ मार्त्तण्डबिम्बोदयः,
आम्नायादिसमस्तशास्त्रकविताकान्तारकण्ठीरवः।
संसारार्णवलङ्घनक्षममतिर्वाक्सारिकापञ्जरः ।
क्षीराम्भोनिधिफेनपाण्डुरयशाः स्वामी दयानन्दजित् ॥३

प्रतिवादियों के अज्ञानान्धकार के निवारण के लिये जो सूर्यमण्डल के समान उदित होते थे, जो वेदादि समस्त शास्त्रसमूहों के वन में सिंह के समान अप्रतिहतगति थे, जो संसार सागर के पार उतरने में समर्थमति थे, जो वाणी रूपी मैना के लिये पञ्जरस्वरूप थे और जो क्षीरसागर के फेन के तुल्य श्वेत यशवाले थे--उन स्वामी दयानन्द जी की जय हो।

कार्त्तेषु कार्या वद मित्र तथ्यं, कः कृष्णतातः प्रथितः पृथिव्याम् ।
का च प्रशस्ता कवीनां मनीषा, स्वामी 'दयानन्द सरस्वती' कः ॥ ४

दुःखियों पर क्या करनी चाहिये ? संसार में श्रीकृष्ण जी के पिता कौन प्रसिद्ध थे और विद्वानों की विद्या क्या कहलाती है ? उत्तर— दया, नन्द, सरस्वती।

जयति ब्रह्मोद्धर्त्ता, महर्षिः स्वामिदयानन्दः।
यस्यास्यच्युतसत्यार्थविकाशामृतं जगत् पिबति ॥ ५

जय हो उन वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द जी महाराज की, कि जिनके मुखस्रोत से प्रवाहित सत्यार्थप्रकाश रूपी अमृत का सारा संसार पान कर रहा है।

—पं० रामजीलाल शर्मा

०——०

(११) महर्षि-महिमा

(शिखरिणी छन्द)

श्रुतीनां सर्वस्वं निखिलगुणयुक्तं यतिवरम् ।
अनाथानां नाथं निगमविमुखानां यमनिभम् ।
परित्यक्तत्राणं परहितरतं नित्यमुदितम्
दयानन्दं वन्दे निखिलखलपाखण्डदलनम् ।। १

जो वेदों का सर्वस्व था, या वेद ही जिसके सर्वस्व थे, जो अशेष गुण-सम्पन्न यति था, अनाथों का रक्षक तथा वेद के विरोधियों के लिये यमराज के तुल्य था, समाज से बहिष्कृत लोगों का रक्षक, परहित में लीन तथा नित्य प्रसन्न था, ऐसा स्वामी दयानन्द जो समस्त पाखण्डों को नष्ट करने में समर्थ है, हमारे द्वारा वन्दनीय है ।

नृणामुद्धर्तारं विबुधकुलशोभां सुविदितम् ।
क्षमाक्षेत्रं मित्रं प्रभुमननपूतं निगमनम् ।
विशालाक्षं शुभ्रं विधुरिव च निर्दोषवपुषम् ।
दयानन्दं वन्दे श्रुतिघनमनिन्द्यं सुसुखदम् ।। २

जो लोगों का उद्धारक था, जो विद्वानों के कुल की शोभातुल्य था, जो क्षमा का क्षेत्र, सबका मित्र तथा परमात्मा के चिन्तन से पवित्र था, जिसके नेत्र विशाल थे तथा जिसका शरीर चन्द्रमा के तुल्य शुभ्र तथा पवित्र था । ऐसे अनिंद्य दयानन्द जी सुखदायक तथा वेदरूप हैं, वे हमारे सर्वथा वन्दनीय हैं ।

महावीरो धीरः श्रुतिविहितकर्मानुकुशलः ।
तपश्चर्याशुद्धः समयविदतुल्यो विमलधीः ।
दयाया लोकेऽस्मिन् प्रतिकृतिरिवायं विरचितः ।
दयानन्दो वंद्यः परमपदवीप्राप्तपुरुषः ।। ३

जो महान् वीर, धैर्यवान् तथा वेदविहित कर्मों को करने में कुशल थे, जो तपश्चर्या के द्वारा शुद्ध समय को जाननेवाले तथा पवित्र बुद्धिवाले थे । उन्हें मानो विधाता ने इस लोक में दया की मूर्ति के रूप में ही बनाया था, ऐसे परमपद (मोक्ष) प्राप्त महापुरुष दयानन्द हमारे वन्दनीय हैं ।

परेशे विश्वासी सुहितमितभाषी मुनिवरः ।
सदा सत्यान्वेषी बुधजनहितैषी जनकवत् ॥
सुधन्यः श्रीस्वामी कठिनपथगामी दृढमतिः ।
दयानन्दो वन्द्यो दिनमणिरिवायं विकसितः ॥४

जो परमात्मा का विश्वासी, कल्याणकारी और स्वल्प वचन बोलनेवाला मुनिवर था, जो सदा सत्यान्वेषण में तत्पर, बुद्धिमान् लोगों का पितातुल्य हितैषी था, ऐसे दृढ़ बुद्धिवाले तथा कठिन मार्ग के पथिक स्वामी धन्यवाद के पात्र हैं। सूर्य के तुल्य प्रकाशमान् दयानन्द हमारे वंदनीय हैं।

विजेतव्या काशी परिषदि सहायं निजवपुः ।
विपक्षा अग्रासाद्या सकलजनता राज्यसहिता ॥
दयानन्देनाहो तदपि शिवकाशी विजयता ।
क्रियासिद्धिः सत्त्वे वसति महतां नोपकरणे ॥५

काशी शास्त्रार्थ के समय जहां विपक्ष में विद्वान् पण्डितों के अतिरिक्त वहां का राजा तथा जनता भी थी, स्वामी जी ने केवल अपने आत्मबल से ही उस शास्त्रार्थ को जीत लिया। इससे वह भली-भांति सिद्ध होगया कि क्रिया की सिद्धि करनेवाले के बल में निहित होती है न कि उपकरणों में।

—स्वामी कर्मानन्द सरस्वती
दयानन्द गुणगान से उद्धृत

o——o

(१२) दयानिधि नमामि

पुराणपापनाशकं श्रुतेर्मतप्रकाशकम् ।
स्वधर्मकर्ममण्डितं च वेदशास्त्रपण्डितम् ।
प्रमाणशस्त्रधारकं सुधारकं प्रचारकम् ।
दयानिधिं नमामि तं दयानिधिं नमामि तम् ॥१

जो पुराणों में वर्णित पापों को नष्ट करनेवाला तथा वेद के मत को प्रकाशित करनेवाला था, जो स्वधर्म और कर्म से सुशोभित तथा वेदशास्त्रों का

पण्डित था, जो वेद प्रमाणरूपी शस्त्र को सदा धारण किये रहता था तथा समाज सुधारक एवं वेद का प्रचारक था उस दया के भण्डार दयानन्द को हम नमन करते हैं।

विपक्षव्रातभञ्जकं कुतर्कजालगञ्जकम्।
सुविज्ञचित्तरञ्जकं च पापपुञ्जखंजकम्॥
स्वतन्त्रबुद्धिदायकं स्वतंत्रताविधायकम्।
नमामि तं नमामि तं नमामि तं नमामि तम्॥२

जो विरोधियों के पक्ष को नष्ट करनेवाला, कुतर्कजाल को छिन्न-भिन्न करनेवाला, विज्ञजनों के चित्त को प्रसन्न करनेवाला तथा पापसमूह को नष्ट करनेवाला था। जो स्वतन्त्र चिन्तन की शक्ति को देनेवाला तथा स्वतन्त्रता का विधायक था, उस दयानन्द को सतत नमन करते हैं।

अनाथबालपालकं स्वदेशभक्तिचालकम्।
विशुद्धभावधारकं सुधारकं प्रचारकम्॥
दयायुतं प्रमोददं यशोधनं यशोबलम्।
नमामि तं नमामि तं नमामि तं नमामि तम्॥३

जो अनाथ बालकों का पालनकर्ता तथा स्वदेशभक्ति का संचालक था, जो विशुद्धभावयुक्त सुधारक तथा प्रचारक था, जो दयायुक्त, आनन्द देनेवाला, यशस्वी तथा यश को ही बल समझनेवाला था, उस दयानन्द को हम सतत नमन करते हैं।

विविधपथविवादध्वान्तविध्वंसकारी।
यमनियमविहारी श्रौतधर्म-प्रचारी॥
निगमनियमकारी दैन्यसंतापहारी।
त्रिजगति विजितारिः सर्वदा ब्रह्मचारी॥४

जो विविध मतवादरूपी अन्धकार को नष्ट करनेवाला था, जो यम और नियमों का पालन करनेवाला तथा वैदिक धर्म का प्रचारक था, जो वेदानुसार नियमों का निर्माणकर्त्ता तथा दीनता एवं संताप को दूर करनेवाला था, ऐसा तीनों लोकों के शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाला अखण्ड ब्रह्मचारी दयानन्द ही था।

—स्वामी कर्मानन्द सरस्वती
दयानन्द गुणगान से उद्धृत

—o—

(१३) जगन्नभसि दयानन्दचन्द्रः

अस्तं यातो भुवननभसो वेदभास्वान् यदास्माद्-
विश्वं विश्वं तमसि विपुले पातयन् घोरपापे ।
नानाप्राणिप्रकरकरुणक्रन्दनं नाटयन्ती,
लोकं व्याप्य व्यचरदभितोऽज्ञानरूपा तमिस्रा ॥१

जब समस्त संसाररूपी आकाश से वेदरूपी सूर्य अस्त होगया तब संसार को घोर पापरूपी गहन अन्धकार के गर्त में गिराती हुई तथा नाना प्रकार के प्राणिसमूह को करुण क्रन्दन करवाती हुई अज्ञान तमिस्रा का चारों ओर निष्कण्टक साम्राज्य छा गया ।

दृष्ट्वा लोकं बहुविधविपद्ग्रस्तमस्तं प्रयान्तं,
घोराचारप्रबलविपदामास्पदं पङ्कलीनम् ।
दुःखध्वान्तं विघटयितुमुन्मीलितं व्योमसोम्नि,
प्राज्ञज्योतिर्ग्रहविततिभिस्तीव्रबुद्धिप्रभाभिः ॥२

दुराचाररूपी भयंकर विपत्तियों से कलंकित, अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त, मरणासन्न संसार को देखकर प्रकृष्ट ज्ञानज्योतिरूपी ग्रहपंक्तियों एवं अपनी तीव्र बुद्धि की प्रखर किरणों के द्वारा संसाररूपी आकाश में छाए हुए दुखध्वान्त (अन्धकार) को छिन्न-भिन्न करने के लिए—

सर्वत्रेह प्रसृतमखिलं ध्वान्तजालं विभिन्दन्
ज्ञानाम्भोधिं विमलकिरणैर्वर्धयन् बुद्धिरूपैः ।
विद्वज्ज्योतिर्ग्रहगणरुचौ वेदसूर्यप्रकाशो-
विश्वाकाशे समुदयमितः श्रीदयानन्दचन्द्रः ॥३

इस संसार में सर्वत्र फैले हुए समस्त अज्ञान अन्धकार जाल को नष्ट करता हुआ और ज्ञानसागर को अपनी बुद्धिरूपी विमल किरणों के द्वारा बढ़ाता हुआ, विद्वानों के ज्ञानरूपी ग्रहगण से सुशोभित एवं वेदज्ञानरूपी सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान् श्रीमद्दयानन्दरूपी चन्द्र भूमण्डल पर उदित हुआ ।

सच्छास्त्राणाममृतकिरणैस्सत्यबोधोपमानै-
र्मर्त्यालीनामिव सुरुचिरैस्तैश्चकोरप्रियाणाम् ।

आर्तिहर्ता तिमिरविहतानां द्विजालंकृतस्सन्,
भौमाकाशे व्यलसदमलः श्रीदयानन्दचन्द्रः ।।४

वेदादि सत्य शास्त्रों के यथार्थ ज्ञानरूपी सुरुचित अमृततुल्य किरणों के द्वारा चकोरप्रियाग्रों की भांति, अज्ञान अन्धकार से दुखित मनुष्यों के दुःखों को दूर करनेवाला, द्विजों से अलंकृत, सच्चरित्र श्रीमद्दयानन्दरूपी चन्द्र भूमण्डल पर शोभायमान हुआ।

उन्निद्रं तं सपदि रचयन् ज्ञानचक्षुस्समूहं
लोकानन्दप्रद इह तदा कैरवव्राततुल्यम्।
सम्पूर्णं तद् भुवनवलयं शुक्लयन् शुक्लपादै-
र्विश्वव्योम्नि व्यचरदमलः श्रीदयानन्दचन्द्रः ।।५

जब श्रीमद्दयानन्दरूपी चन्द्र ने अपने ज्ञानचक्षुग्रों को झटपट उन्निद्र (प्रबुद्ध या विकसित) किया तब वह श्वेत कमलों की भांति प्राणिमात्र के लिए आनन्दप्रद सिद्ध हुआ। समस्त भूमण्डल को ग्रपनी ज्ञानचन्द्रिका से धवलित करते हुए निष्कलंक श्रीमद्दयानन्दरूपी चन्द्र ने संसाररूपी आकाश में विहार किया।

ग्राशामैन्द्रीमरुणकिरणैः रञ्जयन्तं समीक्ष्य,
भौमाकाशं निगमतरणि काशयिष्यन्तमग्रे ।
निश्चित्यासौ चरमसुगिरेस्तुङ्गशृङ्गावलम्बी
यातोऽस्तं नु प्रकृतिरुचिरः श्रीदयानन्दचन्द्रः ।।६

प्राचीदिशा को अरुण किरणों से रञ्जित देखकर भूमण्डल को वेदरूपी सूर्य अवश्य ही प्रकाशित करेगा, ऐसा निश्चय करके अस्ताचल में सर्वोच्च शिखर का अवलम्बन करता हुआ निसर्ग सुन्दर दयानन्दरूपी चन्द्रमा ग्रस्त होगया।

—पं० मेधाव्रताचार्य
अनुवादक—पं० वेदव्रत शास्त्री
गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर १९६२ में प्रकाशित

—०—

(१४) महर्षिदयानन्दोदयसमये भारतदशावर्णनम्

(ध्रुवपदम्)

सदानन्दकन्दानुकम्पेरितं दयानन्दयोगीश्वरेणोदितम् ।
अविद्यामयध्वान्ततान्तैर्मनुष्यैर्नितान्तं यदा भारतं पूरितम् ॥१

जिस समय योगिराज दयानन्द का आविर्भाव हुआ, उस समय अविद्यारूपी अन्धकार से सारा भारत परिपूरित था।

मतं कुत्सितं भारतीयैर्यदेमां विहाय श्रुतिं विश्रुतां संश्रितम् ।
यदा मूर्तिपूजाप्रसक्तैस्स्वसक्तैरविद्यायुतं भारतं लुण्ठितम् ॥२

वेदों को भूलकर भारतवासी कुत्सित मतों को मानने लगे थे। अविद्यायुक्त लोग मूर्तिपूजा में लगे थे तथा भारत लुण्ठित हो रहा था।

दुराचारघोरे कुकृत्ये स्थितैस्तैर्मदान्धैर्यदा वांछितं क्रीडितम् ।
न धर्म्यं सुकर्माश्रितं वैदिकं तत् कुकर्मारममारतं भारतम् ॥३

घोर दुराचार एवं कुकृत्यों में लोग मदान्ध के तुल्य रत थे। सुकर्म एवं धर्म पर आश्रित कर्मों को छोड़ देने के कारण भारत आर्त हो रहा था।

न माता न बन्धुर्न मे हा ! पितेत्थं यदानाथबालैरहाऽऽक्रोशितम् ।
समस्तं स्वकं शौर्यवीर्यादिकृत्यं यदा दर्पितैर्दर्पदेवेऽर्पितम् ॥४

तब अनाथ बालक माता, पिता और बन्धु से हीन होकर रोते चिल्लाते थे। भारतवासियों ने अपना शौर्य, वीर्य और पराक्रम अहंकाररूप देव के अर्पित कर दिया था।

न देशाभिमानो न वा राजभक्तिर्न शक्तिः प्रसक्तिर्विलासे यतः ।
यदाऽसीद्दृशेयं स्वदेशस्य शोच्या तदाभारतालंकृताऽलंकृतम् ॥५

लोगों में न देशाभिमान था, न राजभक्ति और न शक्ति ही थी। स्वदेश की ऐसी शोचनीय स्थिति जब थी, तब इस अनलंकृत भारत को दयानन्द ने अलंकृत किया।

योगीन्द्रदयानन्दोदयानन्तरं भारतवर्णनम्

सदानन्दकन्दानुकम्पाश्रयो दयानन्दयोगीन्द्रसूर्योदयः ।
ततो येन धर्मस्स शर्माभिरामो विरामो विपत्तेः सुवेदाश्रयः ।। १

जिस समय दयानन्दरूपी सूर्य का उदय हुआ, तब वेद के आश्रय से विपत्ति समाप्त हुई और शान्तिदायक धर्म का प्रचार हुआ ।

कृतो येन वेदोक्तशास्त्रादिकानां श्रुतीनां पुनः पावनः सूदयः ।
दरीदृश्यते येन नानाविधानामितस्सर्वतः संसदा संचयः ।।२

उन दयानन्द ने वेद तथा शास्त्रों का पुनः पवित्र प्रचार किया । उन्हीं के कारण सर्वत्र विविध संस्थाएं दिखाई देती हैं ।

यतोऽनाथबालावलोपालनार्थं महान् वीक्ष्यतेऽसावनाथालयः ।
क्वचिन्मन्त्रगानं क्वचिद्धर्मचर्चा क्वचिद् विद्यते वर्णिविद्यालयः ।।३

जिनके कारण अनाथ बालकों के पालन हेतु अनाथालय दिखाई देते हैं । कहीं मंत्रगान हो रहा है, कहीं धर्मचर्चा हो रही है तो कहीं ब्रह्मचर्याश्रम दिखाई दे रहे हैं ।

क्वचिद् ब्रह्मणः कीर्तनं कीर्तनीयो य एवार्चनीयोऽस्ति सौख्यालयः ।
क्वचिन्मंगलं मंगलेशस्य गीतं क्वचित्पावनो यज्ञधूमोच्चयः ।।

कहीं ब्रह्म का कीर्तन हो रहा है तो कहीं परमात्मा की पूजा अर्चा हो रही है । कहीं मंगलदाता परमेश्वर का मंगलगान हो रहा तो कहीं पवित्र यज्ञधूम का वातावरण बन रहा है ।

यथार्थं श्रुतीनामलं बोधितोऽर्थः पुनर्येन सत्योऽतिगूढाशयः ।
भुवो मण्डलं येन बोधांशुजालैरलं भासितं तस्य पुण्योदयः ।।५

जिसने श्रुतियों के निर्मल और यथार्थ आशय को अत्यन्त स्पष्ट किया, समस्त भूमण्डल जिसकी ज्ञानरूपी किरणों से भासमान हो रहा है यह उसी महर्षि के पुण्यों का फल है ।

पं० मेधाव्रताचार्य
(परोपकारी माघ-२०१८ वि०)

——

(१५) दयानन्द विर्भावः

नमस्तस्यै जगन्मात्रे कुर्मो भारतभूमये ।
पादाक्रान्ताऽपि या नित्यं शरणागतवत्सला ॥१

मैं उस जगन्माता भारतभूमि को नमन करता हूं जो शत्रुओं से पादाक्रान्त होने पर भी शरण में आये हुए लोगों के साथ वात्सल्य का व्यवहार करती रही है ।

मौर्वीटंकारजन्मानं भीषणं धर्मविद्विषाम् ।
आर्त्तानां सान्त्वनं वन्दे तमानन्दं दयामयम् ॥२

मौरवी राज्य के टंकारा ग्राम में जन्म लेनेवाले, धर्मद्वेषियों को भयंकर लगने वाले तथा पीड़ितों को सान्त्वना देनेवाले दयामय दयानन्द की मैं वन्दना करता हूं ।

चिरं लोकोत्तरैश्वर्य-भोगजा तपसः क्षयात् ।
या स्वराज्यपरिभ्रष्टा पाराधीन्यमुपागमत् ॥३

इस आर्यावर्त ने चिरकाल तक लोकोत्तर ऐश्वर्य का उपभोग किया किन्तु अपने तप क्षय के कारण यह स्वराज्य से भ्रष्ट हुआ तथा पराधीनता को प्राप्त होगया ।

तस्याः क्रोडे जनपदः सौराष्ट्र इति विश्रुतः ।
जरासन्धपरित्रस्तो यं कृष्णः शरणं ययौ ॥४

इसी आर्यावर्त की गोद में बसा सौराष्ट्र नामक प्रसिद्ध जनपद है । मगध के जरासन्ध से पीड़ित होकर कृष्ण भी इसी भूमि की शरण में आये थे ।

मौर्वीत्याख्यं प्रमुदितं तत्र रम्यं महीभुजाम् ।
धर्मद्विषत्सु ये नित्यं व्याततेष्वासपाणयः ॥५

इसी सौराष्ट्र में मौरवी नामक राज्य है जहां के राजा धर्मद्वेषियों को अपने बाणों से सदा ही नष्ट करते थे ।

टंकारेति समाख्यातस्तत्र ग्रामः शुभाक्षरः ।
धर्मोऽरातिभयाद् यस्य नाम यातं यथार्थताम् ॥६

इस राज्य में टंकारा नामक एक शुभ अक्षरयुक्त ग्राम है । धर्म के शत्रुओं

के लिये इस टंकारे की टंकार सचमुच भयानक सिद्ध हुई अतः इस ग्राम ने अपने नाम को वस्तुतः चरितार्थ किया था।

अनुग्रहाय लोकानां यथा भागीरथी नदी।
काचिदौदीच्यविप्राणां शाखागाद्दक्षिणापथम् ॥७

जिस प्रकार लोक का हित करने के लिये गंगानदी हिमाचल से दक्षिण की ओर प्रवाहित हुई, उसी प्रकार औदीच्य ब्राह्मणों की कोई शाखा भी दक्षिणापथ की ओर गई।

कालक्रमेण विप्रास्ते गुणग्राहितया पुनः।
मौर्वीशस्य शुभे राज्ये टंकारा-ग्राममागताः ॥८

कालक्रम से वे ब्राह्मण मौरवी नरेश की गुणग्राहकता के कारण इस राज्य के टंकारा ग्राम में आकर बस गये।

तेषामेवान्वये बिप्रस्त्रिवेदी विरुदान्वितः।
कर्षणेति परिज्ञातो दुष्टदौरात्म्यकर्षणः ॥८

इन ब्राह्मणों में त्रिवेदी उपाधिधारी एक कर्षन जी नामवाले ब्राह्मण थे जो दुष्टों और दुरात्माओं को वस्तुतः पीड़ा देनेवाले ही थे।

तस्मिन्नुदात्तो सद्वंशे हिमाद्रिशिखरोपमे।
कोऽपि प्रजानामवनेः पुण्यौघ इव मूर्तिमान् ॥१०

हिमालय के शिखर के तुल्य ऊंचे इस सद्वंश में धरती पर पुण्य के समूह के तुल्य किसी एक महापुरुष का जन्म हुआ।

असह्यवेगस्तपसा वादिकूलङ्कषाग्रणी।
प्रादुरासीत् पुमान् गंगा-प्रवाह इव निर्मलः ॥११

जो महापुरुष गंगा के प्रवाह के तुल्य निर्मल तथा अपने तपरूपी असह्य वेग के साथ उत्पन्न हुआ था, वह वेदवादियों में अग्रणी था।

शमस्य तपसश्चापि परस्परविरोधिनोः।
सह नित्यमवस्थानाल्लोकविस्मयकारणम् ॥१२

शम और तप जो परस्पर विरोधी कहे जाते हैं, इन दोनों ने स्वामी दयानन्द में एक ही स्थान सहअस्तित्व किया है, यह वस्तुतः विस्मय-कारक है।

वेदान्तदोग्धा गोपाल: शब्दशास्त्रस्य पाणिनि: ।
सर्ववेदगिरां दोग्धा विरजानन्दनन्दन: ।। १३

वेदान्तरूपी दूध को शास्त्रों से दुहनेवाले कृष्ण थे । शब्दशास्त्र का दोहन पाणिनि ने किया । इसी प्रकार वेद के समस्त ज्ञान को दुहनेवाले विरजानन्द के प्रिय शिष्य दयानन्द थे ।

—पं० बुद्धदेव विद्यालंकार
वैश्वानर—दिसम्बर १९८३

०——०

(१६) दयानन्द: स्वामी

'अहो ! नद्य: शैला जलनिधिरयम्पावनमिदं
जगत् खण्डं खण्डं विदधति जयी हन्त ! जडिमा ।
विलुप्तं चैतन्यं कमिह शरणं यामि' विमृशन्
दयानन्द: स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। १

अहा, ये नदी, पर्वत, समुद्र तथा यह पवित्र जगत् जिस परमात्मा के द्वारा खण्ड-खण्ड कर दिया जाता है । इस तथ्य को विचारकर मेरा चैतन्य ही लुप्त होता जाता है । मैं किसकी शरण में जाऊं ? ऐसे विचार करनेवाले स्वामी दयानन्द हमारे नेत्रपथगामी होवें ।

न शाखा न्योग्रधात् क्वचिदपहृता मारुतबलात् ।
प्ररोहं संयाता कथमपि विभिन्नापिविटपात् ।
अहो मुग्धा युद्धै: क्षपयत बलमित्युपदिशन् ।
दयानन्द: स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। २

वायु के बल से वृक्ष से भिन्न हुई शाखा पुन: वृक्ष के रूप में उत्पन्न नहीं हो सकती । संसार के लोग युद्धों में अपनी शक्ति लगाकर नष्ट हो रहे हैं । ऐसा उपदेश देनेवाला दयानन्द हमारा नेत्रपथगामी होवे ।

पिता येषामेकस्त्वमसि निगमानां प्रसविता
जगन्मूलं येषामदितिपदवाच्या च जननी ।

त एते युध्यन्ते जगति भगवन्नित्यतिरुदन् ।
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। ३

जो परमात्मा वेदों को उत्पन्न करनेवाला एक ही पिता है, जो संसार का मूल है और अदिति नामवाली जननी है, उस ईश्वर को भुलाकर ये संसारवासी परस्पर युद्ध में लगे रहते हैं, यह विचार मन में लाकर जो महापुरुष रो पड़ता था, वह स्वामी दयानन्द हमारा नेत्रपथगामी हो ।

अलम् नद्यः शैलाः प्रणमयत शृंगाण्मम पुर-
स्तरङ्गान् पाथोधे ! त्वमपि बहुभृंगान् परिहर ।
अखण्डं सौभ्रात्र ! त्वमिह कुरु राज्यं स विदनन् ।
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। ४

जिस दयानन्द ने कहा था—हे नदियो और पर्वतो, तुम अपनी लहरों और चोटियों को मेरे सम्मुख झुकाओ, हे समुद्र तू अपनी बहुभंगिमायुक्त तरंगों को दूर कर ले । जिसने संसार में पारस्परिक भाईचारे को ही राज्य करने के लिये कहा, वह स्वामी दयानन्द हमारे नेत्रपथगामी हों ।

स्वयं लक्ष्म्या नित्यं स्वकरयुगसंवाहितपदो
न राजा सम्राजामपि स लभताञ्चेतसि पदम् ।
स बिभ्रत् कौपीनं जगदिदमदीनं विचरयन्
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। ५

लक्ष्मी स्वयं अपने युगलकरों से जिसके चरणों को दबाती है, जो विचारशील लोगों के मत में राजाओं का भी राजा था, जिसने मात्र कौपीन धारण कर अदीनभाव से संसार में विचरण किया, वह दयानन्द स्वामी हमारे नेत्रपथगामी हों ।

शशाङ्कश्चेन्मैवं नियतमकलंकः पुनरयम् ।
रविश्चेत् स्वान्ताना ङ्कथमिव तमोऽपोहितुमलम् ।
कवीनां दारिद्रय विदधदुपमानस्य विचये ।
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।। ६

स्वामी दयानन्द को चन्द्रमा के तुल्य कहना उचित नहीं क्योंकि चन्द्रमा में कलंक होता है । उसे सूर्य कहना भी उचित नहीं क्योंकि सूर्य स्वान्तस्थ तम को दूर करने में असमर्थ है । अतः यह कवियों की दरिद्रता ही है कि वे स्वामी

दयानन्द के लिये किसी उपमान को ढूंढने में असफल रहे हैं। वही स्वामी दयानन्द हमारे नयनपथगामी होवें।

पं० बुद्धदेव विद्यालंकार
वैश्वानर–दिसम्बर, १९८३

०——०

(१७) युगनिर्माता महर्षिदयानन्दसरस्वती

निखिलनिगमवेत्ता, पापतापापनेता,
रिपुनिचयविजेता, सर्वपाखण्डभेत्ता।
अतिमहत् तपस्वी, सत्यवादी मनस्वी
जयति स समदर्शी वन्दनीयो महर्षिः ।।

समस्त वेदों के ज्ञाता, पापों और तापों के विनाशक, विपक्षी दल पर विजय प्राप्त करनेवाले, सब पाखण्डों के नष्ट करनेवाले, अत्यन्त महान् तपस्वी, सत्यवक्ता, मनस्वी तथा समदर्शी महर्षि दयानन्द की जय हो, वे हमारे वन्दनीय हैं।

अविकृतम उदारो धर्मसम्बोधकेषु
श्रुतिविहितविचारो लोकसंरक्षकेषु।
विदितनिगमसारो ब्रह्मचार्यग्रगण्यो
जयति स कमनीयो वन्दनीयो महर्षिः ।। २

धर्मप्रवचनकर्ताओं में जो सर्वाधिक उदार थे, जो लोकसंरक्षकों में वैदिक विचारों के प्रचारक थे, जो ब्रह्मचारियों में अग्रणी थे तथा जिन्होंने वेदों के सारतत्त्व को जान लिया था, वे कमनीय महर्षि दयानन्द वन्दनीय हैं।

विमलचरितयुक्तः पापमुक्तः प्रशस्तः
सकलसुकृतकर्ता, कर्मराशावसक्तः।
दलितजनसुधारे, सर्वदा दत्तचित्तः
जयति स कमनीयो वन्दनीयो महर्षिः ।। ४

शुद्ध चरित्रवाले, निष्पाप, परोपकारी, शुभ कर्म करनेवाले तथा कर्मों में

निरासक्त, दलितजनों के सुधार में सदा दत्तचित्त, ऐसे वन्दनीय महर्षि दयानन्द की जय हो।

प्रथितधवलकीर्तिः शुद्धधर्मस्य मूर्तिः
प्रसृतनिगमरीतिः शत्रुवर्गेऽप्यभीतिः।
अनुसृतशुभनीतिः वेदशास्त्रेष्वधीती,
विबुधगणवरेण्यो वन्दनीयो महर्षिः॥ ४

जिनकी विशुद्ध कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध है, जो विशुद्ध धर्म की मूर्ति हैं, जिन्होंने वेदमर्यादा का प्रसार किया है तथा जो अपने विरोधी लोगों से भयभीत नहीं होते। शुभ नीति का अनुसरण करनेवाले, वेदशास्त्र के अध्येता, विद्वानों में श्रेष्ठ महर्षि दयानन्द वन्दनीय हैं।

--पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति
विद्यामार्तण्ड

०——०

(१८) महर्षिदयानन्दस्तवः

एकोऽपि सन् निर्भयवीरवर्यः
समस्तपाखण्डमखण्डयद् यः।
सत्यव्रतश्रेष्ठममुं महान्तम्
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि॥ १

जिन निर्भय वीर ने अकेले होते हुए भी समस्त पाखण्डों का खण्डन किया, उन सत्यव्रतधारियों में श्रेष्ठ ऋषि दयानन्द को मैं नमस्कार करता हूं।

न यं कृतान्तोऽप्यशकद् विजेतुं
यस्याग्रतो बद्धकरः स तस्थौ।
योगाग्निना दग्धसमस्तदोषम्
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि॥ २

जिसको मृत्यु भी नहीं जीत सकी परन्तु वह जिसके आगे हाथ बान्धे खड़ी रही। जिसने योगाग्नि से समस्त दोषों को दग्ध कर दिया था, उस ऋषि दयानन्द को मैं नमस्कार करता हूं।

विषं प्रदायाप्यपकारकर्त्रे
योऽदाद् धनं तस्य हि रक्षणार्थम् ।
प्रेम्णा स्वशत्रूनपि मोहयन्तं
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि ।। ३

विष देनेवाले अपकारी को भी जिसने रक्षार्थ धन दिया, प्रेम से अपने शत्रुओं को भी मोहित करनेवाले उस ऋषि दयानन्द को मैं नमस्कार करता हूं ।

यद्यंगुलीरप्यरयो दहेयु-
स्तथापि यास्यामि न तत्र चिन्ता ।
इत्यादिवाक्यं समुदाहरन्तं
तं श्रीदयानन्दमहं नमामि ।। ४

चाहे विरोधी मेरी अंगुलियों की पोरियों को भी जला दें, फिर भी मैं वहां (जोधपुर) अवश्य जाऊंगा । ऐसे वाक्यों को कहनेवाले दयानन्द स्वामी की मैं वन्दना करता हूं ।

दयाया यः सिंधुर्निगमविहिताचारनिरतो
विलुप्तं सद्धर्मं पुनरपि समुद्धर्तुमनिशम् ।
दिवारात्रं येते यतिवरगुणग्रामसहितो,
दयानन्दो योगी, विमलचरितोऽसौ विजयते ।। ५

जो दया के सागर थे, वेदप्रतिपादित आचार में निरत थे, विलुप्त सद्धर्म की रक्षा के लिये जिन्होंने रात-दिन यत्न किया । ऐसे अनेक गुणों के भण्डार योगी दयानन्द की जय हो ।

यदीयं वैदुष्यं श्रुतिविषयकं लोकविदितं
यदीयं योगित्वं कलियुगजनेष्वस्त्यनुपमम् ।
हितार्थं सर्वेषां इह निजसुखं यस्तु विजहौ,
दयानन्दो योगी विमलचरितोऽसौ विजयते ।। ६

जिनकी वेदविषयक योग्यता लोकप्रसिद्ध है, जिनकी योगसाधना कलियुग में अनुपम थी, सबके हित के लिए जिन्होंने अपने सुख को भी त्याग दिया, ऐसे विमलचरित्रयुक्त योगी दयानन्द की जय हो ।

स्वराज्यं सर्वेभ्यः परमसुखदं शान्तिजनकं
स्वदेशीयो धार्यः सकलमनुजैर्वस्त्रनिवहः ।

स्वराष्ट्रं चाराध्यं दिशि दिशि दिशन् भीतिरहितो,
दयानन्दो योगी, विमलचरितोऽसौ विजयते ।। ७

स्वराज्य परम सुख और शान्तिदायी होता है, सब लोगों को स्वदेशी वस्त्र ही धारण करने चाहिएं। अपने राष्ट्र की आराधना या सेवा सदा करनी चाहिए। निर्भय होकर जिन्होंने सर्वदिशाओं में ऐसे उत्तम भावों का प्रचार किया, वे योगी दयानन्द विजय को प्राप्त करें।

जना सर्वे नूनं भुवनजनितुः पुत्रसदृशाः
अतोऽन्योऽन्यं स्नेहः सकलमनुजानां समुचितः ।
न कोऽप्यस्पृश्यो ना इति विमलभावं प्रचरयन्
दयानन्दो योगी सरलहृदयोऽसौ विजयते ।। ८

संसार के सब मनुष्य जगदुत्पादक एक ईश्वर के पुत्र हैं, इसलिए सबको परस्पर स्नेहयुक्त होना उचित है, कोई भी अस्पृश्य नहीं है। इस प्रकार के विमल भाव के प्रचारक सरल हृदयवाले योगी दयानन्द की जय हो।

पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति
गुरुकुल पत्रिका कार्तिक २०२६ वि०

०——०

(१९) सम्मान्यदयानन्दः

ददौ प्रियं जीवितमेव सर्वं
वेदप्रचाराय शुभाय देवः ।
रुद्धं पदं यस्य न विघ्नकाले
स्वामी दयानन्द इतीह मान्यः ।। १

जिस देवता ने अपना प्रिय समस्त जीवन हमें शुभ वेदप्रचार के लिये दे दिया, आपत्तिकाल में भी जिसके पग कभी नहीं रुके। ऐसा यह स्वामी दयानन्द हम सबका पूज्य है।

तेपे तपो यश्च चचार योगं
तत्याज विश्वस्य समस्तभोगम् ।

सौन्दर्यसूत्रैर्न चचाल चेत:
वन्द्यैः सुवन्द्यो ननु वंदनीयः ।। २

जिसने तपस्या की, योगसाधना की, विश्व के समस्त भोगों को छोड़ा, जिसका चित्त सुन्दर चीजों से कभी चलायमान नहीं हुआ। पूजनीयों द्वारा भी पूज्य यह स्वामिवर्य अवश्यमेव पूजनीय है।

यस्यापिधानं भुवि वेद एव,
यस्योपवासो ननु दिव्यवेदः।
वेदः पिपासा च क्षुधापि वेदः
श्वासे च वेदो ननु तस्य साधोः ।। ३

जिस यतिराट् का इस पृथ्वी पर वेद ही बिछौना रहा, जिसका उपवास भी वेद ही था, वेद ही जिसकी भूख और प्यास रहा, जिस साधु के श्वास प्रश्वास में बेद बसा था, वह हम सबका पूज्य है।

वेदस्य केतुं करयोर्गृहीत्वा,
आकाशमध्ये नितरां बभासे।
सर्वत्र वेदञ्च ददर्श विद्वान्
स्वामी दयानन्द इतीह पूज्यः ।। ४

स्वामी दयानन्द वेद की पताका को दोनों हाथों से पकड़कर संसार में सुशोभित हुए। उस विद्वान् को सर्वत्र वेद ही दिखाई देता था। ऐसे वे स्वामी हमारे पूज्य हैं।

वातेषु घोरेषु हिमालयो यः
गाम्भीर्यभावे ननु सागरश्च।
सिद्धान्तवादे ध्रुवधीरचेताः
यती महात्मा श्रुतिकार्यदक्षः ।। ५

जो विरोधरूपी भयंकर आंधी के सामने हिमालय की भांति अडिग रहे, जो गम्भीरता के तो मानो सागर ही थे। शास्त्रार्थ में जो धैर्यशाली रहे, ऐसे वेदकार्य में पारंगत, यति, महात्मा दयानन्द हमारे पूज्य हैं।

दीप्तेषु दीपेषु प्रशान्तदीप्तिः
सा दीपमाला मनुजान्ब्रवीति।
प्रत्यर्पितं येन समस्तमत्र
निर्वाणसंज्ञां स समाप योगी ।। ६

दीपों के प्रकाशयुक्त हो जाने पर प्रशान्त लौ वाली यह दीपमाला सब मनुष्यों को सन्देश दे रही है कि जिसने अपना सब कुछ समर्पित कर रक्खा था, वह योगिवर दयानन्द आज निर्वाण संज्ञा को प्राप्त होगया है।

तस्यास्ति सन्देश इतीह श्रेयान्
　　वेदस्य कार्यं हि पुनीतदिव्यम्।
धनैर्बलैश्चापि मनोभिरार्याः
　　वेदप्रसाराय भवन्तु दक्षाः ॥ ७

उस महात्मा का श्रेष्ठ सन्देश हमारे लिये यही है कि वेद प्रचार का कार्य परमपवित्र है, इसलिये हे आर्यो ! धन, बल और मनोयोग से इस वेदप्रचार के कार्य में लग जाओ।

—पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति

o——o

(२०) महर्षिदयानन्दाय श्रद्धाञ्जलिः

सौजन्यं पटुता दया विमलता गंभीरता वीरता।
　　वाणी प्रेममयी विनोदभरिता निर्भीकता धीरता।
एते हा सकला गुणास्तव निराधाराः प्रजाता इति।
　　शोचामो नितरां गते त्वयि दयानन्दे यशश्शेषताम् ॥ १

हे स्वामी दयानन्द तुम्हारे दिवंगत होते ही सौजन्य, पटुता, दया, पवित्रता, गम्भीरता, वीरता, प्रेममयी विनोदयुक्त वाणी, निर्भयता, धैर्य आदि सभी गुण निराधार हो गये।

भीष्मस्तातमनःप्रसादजननेऽभूद् ब्रह्मचारी पर-
　　मासील्लोकहिताय भो यतिपते ते ब्रह्मचर्यंव्रतम्।
तस्माद् भीष्ममधःकरोषि सदृशः को ब्रह्मचारी तव
　　शोचामो नितरां गते त्वयि दयानन्दे यशश्शेषताम् ॥ २

हे स्वामिन् , भीष्मपितामह को तो अपने पिता को प्रसन्न करने के लिए ब्रह्मचर्य धारण करना पड़ा था, परन्तु आपका ब्रह्मचर्य तो लोकोपकार के लिये

था। अतः तुम भीष्म पितामह से श्रेष्ठ हो। तुम्हारे सदृश ब्रह्मचारी और कौन है? आपके अवसान से हमें अत्यन्त शोक है।

लक्ष्मीस्त्वां समुपागता वरयितुं कृष्टा गुणैस्तावकैः
प्राप्य त्वत्त इवावधीरणमसौ स्थैर्यं न याति क्वचित्।
कीर्तिश्चापि दिगन्तरं गतवती भीतेव ते तेजस
एवं सत्कविभिर्नुते त्वयि गते शोकोऽस्मदीयः परः ॥३

तुम्हारे गुणों से आकर्षित होकर लक्ष्मी तुम्हारा वरण करने आई परन्तु तुमसे अवगणना पाकर वह कहीं भी स्थिरता प्राप्त नहीं कर पा रही है। तुम्हारी कीर्ति भी तुम्हारे प्रताप से डरकर दिशाओं में चली गई है। इस प्रकार हे सत् कवियों से प्रशंसित स्वामी जी, तुम्हारे अवसान से हमें बहुत शोक है।

वाणी ते मधुरामृतेन भरिता प्राणा विनिष्टाः कथं
तेजस्ते परमं निरीक्ष्य न कथं मृत्युर्गतो भस्मताम्।
अज्ञातं वसति स्म त्वयि परा सद्ब्रह्मचर्यप्रभा
तत्तापादिव शुष्कतामुपगतं जीवप्रसूनं स्वयम् ॥४

आपकी वाणी मधुरता से युक्त थी तो आपके प्राण कैसे विनष्ट हुए? आपके तेज को देखकर मृत्यु भी भस्म क्यों नहीं हुई? अरे, अब मुझे ज्ञात हुआ कि आपके भीतर नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की अतुल प्रभा दीप्तिमान् हो रही थी, जिसके ताप से आपका जीवरूपी पुष्प स्वतः ही सूख गया। तुम्हारे जैसे ब्रह्मचारी के प्राण लेने की शक्ति किसमें है।

कामाविष्टमना अभूद्विमकरस्त्वत्कीर्तिहंसीमसौ
दृष्ट्वा तां स्वबलेन चित्तवशगा कर्तुं प्रयेते ततः।
तद्देहे त्वरितं तया कुपितया चञ्चूप्रहारः कृतो
मन्ये धारयति व्रणं स मलिनं तस्मात्कलङ्कच्छलात् ॥५

आपकी कीर्तिरूपी हंसी को देखकर चन्द्रमा उसे बलात् अपने वश में करने लगा। अतः उसने शीघ्र चन्द्रमा पर अपना चंचुप्रहार किया। मेरा अनुमान है कि चन्द्रमा पर जो कलंक है, वह तुम्हारी कीर्तिरूपी हंसिनी द्वारा किया गया व्रण ही है जिसे चन्द्रमा धारण कर रहा है।

त्वत्सेवामकरोत्सदैव हुतभुक् काषायवस्त्रच्छलात्
जिह्वाग्रे तव नर्तकीवदकरोल्लास्यं मुदा शारदा।

शुश्रूषानिरताभवत्सुरनदी चारित्र्यरूपेण च
त्वत्तुल्यो न हि कोऽपि भूतलगतः शोकोऽस्मदीयस्ततः ॥६

भगवा वस्त्ररूपी अग्नि सदा आपकी सेवा करती थी, आपकी जिह्वा पर शारदारूपी नर्त्तकी सदा आनन्द से नृत्य करती थी, वह गंगा नदी चारित्र्य-रूप में आपकी सेवा करती थी। आपके जैसा इस पृथ्वी पर कोई अन्य नहीं रहा, इसका मुझे शोक है।

मन्ये श्यामलतां गतं वियदपि त्वच्छोकदग्धं यतो
वर्षाया जलदस्य गर्जनमिषादाक्रन्दने व्यापतम्।
वृक्षाः पुष्पमिषेण नेत्रसलिलं मुञ्चन्ति धाराहताः
प्रातः कूजनसत्त्वेन रुदनं कुर्वन्ति सर्वे खगाः ॥७

मैं यह मानता हूं कि यह आकाश आपके वियोग में ही काला पड़ गया है। वर्षाकाल में बादलों की यह गर्जना के ब्याज से मानो रो रहा है। वर्षा की धाराओं से आहत वृक्ष पुष्परूपी वियोगजन्य आँसू गिरा रहे हैं तथा प्रातःकाल के समय कूजने के मिष पक्षी भी मानो रुदन कर रहे हैं।

राहोर्भीतिवशात्कदापि शशिनं नो चन्द्रिका मुञ्चति।
तद् वच्चापि सुरप्रभा न सुरतो दूरं क्वचिद् गच्छति॥
तत्कीर्तिप्रमदा शुचिर्गतभया सर्वत्र गन्तुं क्षमा
वीराणां ललनास्तु भीतिरहिता इत्यत्र शंका कुतः ॥८

राहु के भय से ज्योत्स्ना अपने पति चन्द्रमा को कभी छोड़ती नहीं। इसी प्रकार सूर्य की कान्ति सूर्य से कभी दूर नहीं रहती। परन्तु तुम्हारी कीर्तिरूपी स्त्री पवित्र तथा भयरहित है तथा सर्वत्र जाने में समर्थ है। अर्थात् उसका स्पर्श करने की सामर्थ्य किसी में नहीं है। वीरपुरुष की पत्नी का निर्भय होना स्वा-भाविक ही है, इसमें शंका ही क्या ?

देवानामपि मूर्तयो निजगृहाद् नो यान्ति शोकाद् बहिः
स्वादन्ते न हि भोजनं रसमयं प्रीत्यार्पितं पूजकैः।
भाषन्ते वचनं न खेदभरिता ध्यायन्ति शोचन्ति च
दृष्ट्वैवात्र पुराणगौरवहरं वेदप्रचारं तव ॥८

हे स्वामी दयानन्द, मूर्तिपूजा का प्रतिपादन करनेवाले पुराणों की महत्ता को हरनेवाले आपके वेदप्रचार को देखकर मानो शोकातुर हो देवमूर्तियां मंदिरों

के बाहर नहीं जातीं। पुजारियों द्वारा परोसा गया रसमय भोजन भी नहीं खातीं, कुछ भी नहीं बोलतीं, केवल शोकमग्न होकर ध्यानावस्थित एवं स्थिर प्रतीत होती हैं।

भक्ताः सन्ति सहस्रशो व्रतधरा भावेन युक्ता इह
दृष्टाः कैर्न हि मूषकाः शिवगृहे क्रीडापरा मानवैः।
दिव्यप्रेरणया युतस्त्वमिव को जातो महीमण्डले
त्वय्यासीत्करुणा प्रभोर्यतिदयानन्दात्र शंका न हि ॥१०

इस संसार में हजारों भावयुक्त भक्त हैं, शिवमंदिरों में चूहों को क्रीड़ा करते किसने नहीं देखा? परन्तु हे स्वामी दयानन्द, आपके तुल्य दिव्य प्रेरणा किसे प्राप्त होती है? आपके ऊपर निश्चय ही प्रभु की कृपा थी, इसमें कोई शंका नहीं हो सकती।

वादिव्रातगजेन्द्रकेसरिवरः संन्यासिचूडामणि-
र्ज्ञानाम्भोजविकासवासरमणिः कारुण्यवारांनिधिः।
विद्याकल्पलताप्रफुल्लकुसुमं वाग्देवतासंस्तुतो
यातः स्वर्गपथं भुवो यतिदयानन्दः शुचो भाजनम् ॥११

वादियों के समूहरूपी गजेन्द्र के लिये केसरी के तुल्य, संन्यासियों के मुकुट-मणि, ज्ञानरूपी कमल को विकसित करने के लिए सूर्य के तुल्य, दया के सागर, विद्यारूपी कल्पलता के विकसित पुष्प के तुल्य तथा शारदादेवी द्वारा स्तुति प्राप्त करनेवाले स्वामी दयानन्द के स्वर्गपथ पर प्रस्थान से शोक उत्पन्न हो रहा है।

पाखण्डैकपरायणाश्च विषयासंगान्तरंगान्विता
वित्तोपार्जनतत्परा अगणिताः सन्त्यत्र संन्यासिनः।
शुद्धः सत्यरतः क्षमी यमिवरो लोकोपकारी सुधीः
स्त्रीजात्युन्नतियत्नवांस्तव समो मन्ये यतिर्दुर्लभः ॥१२

इस पृथ्वी पर पाखण्डपरायण, विषयासक्त चित्तवाले, द्रव्योपार्जन में तत्पर अनेक संन्यासी रहते हैं, परन्तु आपके जैसा पवित्र, सत्यपरायण, क्षमाशील, संयमी, लोकोपकारी, सद्बुद्धिवाला तथा स्त्री-जाति की उन्नति करनेवाला संन्यासी दुर्लभ है।

प्रासादाः स्फटिकोपलैर्विरचिता राज्यं पृथिव्याः परं
कान्ता कान्तिमती कलासु कुशला भोगा सुरेन्द्रोपमाः।

एतेषां प्रविलोभनेन चलिता नो ते मतिः सत्यत-
स्त्वत्तुल्यो यतिरस्ति न क्षितितले शोकोऽस्मदीयस्ततः ।।१३

स्फटिक निर्मित प्रासाद, पृथ्वी का विशाल राज्य, सुन्दर कलानिपुण स्त्री, इन्द्र जैसे सुख, इन सब वस्तुओं के प्रलोभन से भी आपकी बुद्धि सत्य से विचलित नहीं हुई। आपके जैसा कोई यति इस भूमण्डल पर नहीं हुआ, अतः आपके लिए शोक होता है।

गंगा शम्भुजटागतापि न यशोगंगासमा ते यत-
स्तां यो गच्छति एव स भवेत्पूतस्तदन्यो न हि।
भ्रान्त्वा भूवलयं निखिलं ते कीर्तिभागीरथी
त्वत्तुल्यो यतिरस्ति न क्षितितले शोकोऽस्मदीयस्ततः ।।१४

पौराणिक गाथानुसार शिव की जटा में रहने पर भी गंगा नदी आपकी कीर्तिरूपी गंगा के तुल्य नहीं है। लोकधारणानुसार जो लोग गंगा के पास जाते हैं वे ही पवित्र होते हैं, अन्य नहीं। परन्तु आपकी कीर्तिरूपी गंगा तो समस्त पृथ्वी को पवित्र बनाती है। इस भूमण्डल पर आपके तुल्य संन्यासी नहीं हुआ, अतः आपके लिए शोक होना स्वाभाविक ही है।

मूर्तीनां न हि पूजनं क्वचिदपि वेदेषु संदर्शितं।
नो तस्य प्रतिमा प्रभोरिति वचः सत्यं श्रुतीनामिदम् ।।
नूनं वैदिकधर्म एव भुवने शान्तिप्रचारक्षमः।
एवं सद्वचनं वदिष्यति यतिः को निर्भयोऽतः परम् ।।१५

मूर्तिपूजा का प्रतिपादन वेदों में कहीं दिखाई नहीं देता। उस प्रभु की प्रतिमा नहीं है, यह वेद का वचन सत्य ही है। वस्तुतः वैदिक धर्म ही संसार में शान्ति फैलाने में समर्थ है, ऐसे निर्भीक सत्यवचन और कौन संन्यासी कह सकता है ?

स्वं निर्वासितवान् सुतं दशरथो धर्मो वनं यातवान्
राज्यं सत्परिपालनाय च हरिश्चन्द्रः स्वकीयं जहौ।
एते ते तुलनां कदापि न दयानन्दात्र गन्तुं क्षमाः
प्राणा येन तु सत्यरक्षणकृते त्यक्ता निजाः प्रेमतः ।।१६

सत्य की रक्षा के लिए राजा दशरथ ने अपने पुत्र को निर्वासित किया। युधिष्ठिर वन को तथा राजा हरिश्चन्द्र ने अपना राज्य छोड़ा। हे दयानन्द, ये सब आपकी तुलना नहीं कर सकते क्योंकि आपने तो सत्य की रक्षा हेतु अपने प्राण ही त्याग दिए।

पाषाणस्त्वयि नीचभावभरितैः क्षिप्ताः क्रुधा कैश्चन
केचिद् भोजनमिश्रितं विषमदुस्ताम्बूलपत्रे च ते।
तस्मादप्यभयेन सत्यवचनं प्रोक्तं जनानां पुरः
संन्यासी तव तुल्यतां व्रजति कः सर्वत्र भूमण्डले ।।१७

कितने ही नीच लोगों ने आप पर पत्थर बरसाये, कितने ही अन्य लोगों ने भोजन तथा पान में विष दिया, फिर भी आपने अभयपूर्वक लोगों के समक्ष सत्यवचन ही कहे। समस्त भूमण्डल में आपके तुल्य संन्यासी कौन है ?

धर्मोऽयं खलु मूर्तिमान् न तु यतिः साधारणः कश्चन
ब्रह्मायं श्रुतिशास्त्रकौशलयुतो वा देवतानां गुरुः।
नोचेदस्य मुखारविन्दमतुलां कान्तिं कथं धारये-
देवं त्वां न निरीक्ष्य कस्य हृदये तर्केण लब्धं पदम् ।।१८

यह दयानन्द निश्चित रूप से धर्म के विग्रह थे, यह कोई साधारण संन्यासी नहीं थे। ये वेदों में निपुण ब्रह्मा थे या देवगुरु बृहस्पति थे अन्यथा इनके मुखारविन्द पर इतनी अतुल कान्ति कैसे हो सकती थी। हे स्वामी दयानन्द, आपको देखकर अपने हृदय में ऐसे विचार कौन नहीं करेगा ?

दृष्टं यैर्वदनं प्रसादसदनं हास्यप्रभाभूषितम्
वाणीवैदिकधर्मबोधभरिता पीता सुधावर्षिणी।
यैः सार्धं चलितं त्वया विहसितं संभाषितं चाशितं
धन्यं जीवनमस्ति भो यतिदयानन्दात्र तेषां भुवि ।।१९

जिन्होंने आपके कृपा निकेतनरूपी स्मित प्रभायुत मुख को देखा है, जिन्होंने आपकी वैदिक धर्म के ज्ञान से भरपूर अमृत बरसाती वाणी का पान किया है, जो आपके साथ भ्रमण में रहे हैं, हंसे हैं, बोले हैं, तथा जिन्होंने आपके साथ भोजन किया है, उनका जीवन इस पृथ्वी पर धन्य तथा सफल है।

सूर्ये गच्छति तत्प्रभा न गगने दृग्गोचरा वर्तते
चन्द्रस्यापि न चन्द्रिका हिमकरे याते क्वचिद् दृश्यते।
नूनं त्वय्यमरालयस्य पथिकीभावं प्रयातेऽपि ते
कीर्तिः पूर्णकलामला यतिपते रात्रिंदिवं द्योतते ।।२०

सूर्य के अस्त हो जाने पर उसकी प्रभा दिखाई नहीं देती, इसी प्रकार चन्द्रमा के चले जाने पर चन्द्रिका भी दृष्टिगोचर नहीं होती। परन्तु आपके स्वर्ग

में चले जाने के पश्चात् भी आपकी पूर्ण कलावाली उज्ज्वल कीर्ति रात्रिदिवस प्रकाशित रहती है।

इतिश्री लोहाणाज्ञात्युत्पन्नेन भगवत्सुतेन वल्लभदासेन गाणात्रोपनामकेन विरचित: श्रद्धाञ्जलि: समाप्तिमगमत्।

—वल्लभदास भगवान् जी गणात्रा

—०—

(२१) दयानन्दपञ्चकम्

जयतु दयानन्दर्षि: वेदोदधिपारग: सुकृती।
आर्यधर्मपरित्राता संन्यासी ब्रह्मचर्यव्रती ॥१

उन ऋषि दयानन्द की जय हो जो वेदरूपी सागर को पार करनेवाले श्रेष्ठ पुरुष हैं। जो आर्यधर्म के संरक्षक तथा ब्रह्मचर्यव्रतधारी संन्यासी हैं।

मततमसे यो भानु: सत्यार्थस्य प्रकाशो प्रथित:।
शास्त्रार्थोद्भटभट्ट: आचार्य: शीलसमवेत: ॥२

मत-मतान्तररूपी अन्धकार में जो सूर्य की भांति प्रकाशित होनेवाले तथा सुप्रसिद्ध सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशक हैं। शास्त्रार्थ संग्राम के जो प्रचण्ड सैनिक हैं तथा शीलयुक्त आचार्य हैं।

विज्ञानी ध्रुवध्यानी प्रभुपूजापरायणो भक्त:।
निष्कामो कर्मिष्ठ: स्वधर्मदक्षोऽप्यनासक्त: ॥३

जो विज्ञान को जाननेवाले, ईश्वर के ध्यान तथा पूजा में परायण भक्त हैं, निष्काम कर्म करनेवाले तथा अपने धर्म में दक्ष होने पर जो अनासक्त हैं।

कारुण्यैकपयोधि: विनयी मंगलमयोदारधी:।
येन साधुता सिद्धा य: साधनपरायण: परम: ॥४

जो करुणा के सागर हैं, विनम्र तथा मंगलमय एवं उदारबुद्धि को धारण करनेवाले हैं, जिन्होंने साधुत्व को प्रमाणित किया तथा जो नाना साधनों से युक्त हैं।

मूले भवतु शंकरः चैतन्यो यौवने जातः।
अन्ते च दयानन्दः पीयूषवर्षी प्रख्यातः ॥५

जो मूल में शंकर थे। जिनका बाल्यकाल का नाम मूलशंकर था। जो यौवन में चैतन्य (शुद्धचैतन्य) कहलाये, वे ही जीवन के अवशिष्ट भाग में अमृत वर्षा करनेवाले दयानन्द के नाम से विख्यात हुए।

—डा० मुन्शीराम शर्मा सोम
आर्यमित्र का ऋष्यंक २०२२ वि०

---

(२२) महर्षिदयानन्दप्रशस्तिः

ब्रह्मादि जैमिनिप्रान्त ऋषिवर्गप्रमाणकः।
साक्षाद्द्रष्टा पदार्थानां ब्रह्मचारी ऋषिर्यतिः ॥१

ब्रह्मा से लेकर जैमिनिपर्यन्त जो ऋषिगण हुए हैं वे पदार्थों के साक्षात् तत्त्वद्रष्टा, ब्रह्मचारी एवं तपस्वी थे। स्वामी दयानन्द उन्हें प्रमाण मानते हैं।

पितृपितृव्यकृष्णादेः परानन्दान्निरञ्जनात्।
अवेच्छास्त्रं स दिव्यात्मा पूर्णानन्दात् तथा यतेः ॥२

जिस ऋषि ने पहले अपने पूज्य पिता करसन जी से, पुनः अपने चाचा तथा स्वामी परमानन्द, पं० रामनिरञ्जन शास्त्री आदि से शास्त्रों का अध्ययन किया। स्वामी पूर्णानन्द से भी जिन्होंने अध्ययन किया।

व्यासाश्रमे धराल्यादौ पर्वतानामुपह्वरे।
योगं प्राप शिवानन्द-योगानन्दादिपार्श्वतः ॥३

फिर व्यासाश्रम, धराली की गुफा आदि पर्वतों के निर्जन स्थानों, बीहड़ जंगलों, गुफाओं और प्रपातों में योगी योगानन्द, स्वामी ज्वालानन्दपुरी, स्वामी भवानीगिरि, स्वामी शिवानन्दगिरि आदि से योगसमाधि सीखी।

धर्मसंस्थापको विप्रस्तपःस्वाध्यायसंयुतः ।
विरजानन्दशिष्योऽयं दयानन्दः सरस्वती ।।४

धर्म की पुनः स्थापना करनेवाला, तप एवं स्वाध्याय से युक्त यह ब्राह्मण विरजानन्द के शिष्य दयानन्द सरस्वती के नाम से प्रसिद्ध हुए।

लोकान्तरादन्यसृष्टेरमृताद् वा समागतः।
पुण्यात्मा कल्पये कश्चिद् वेदोद्धारार्थमागतः ।।५

उस ऋषि के सम्बन्ध में कवि की धारणा है कि वे पूर्वजन्म में किसी अन्य लोक में थे और वहां से उन्होंने इस भूलोक में जन्म लिया क्योंकि ये अलौकिक प्रतिभासम्पन्न हैं अथवा परमात्मा की अनन्त सृष्टियों में से किसी अन्य सृष्टि से ही ये इस धराधाम में पधारे हैं अथवा ऐसा प्रतीत होता है कि मुक्ति से लौटे जीवात्मा की विभूति इनमें है, इसीलिये ये वेदोद्धार में प्रवृत्त हुए हैं।

पाखण्डाः खण्डिता येन श्रुतयो विमलीकृताः।
शास्त्राणां च समुद्धारः कृतस्तत्त्वप्रदर्शनात् ।।६

जिस ऋषि ने सब पाखण्डों का खण्डन किया। वेदों पर किये गये आक्षेपों का निराकरण कर वेदों को निष्कलंक घोषित किया तथा सत्य शास्त्रों के तत्त्वों का प्रदर्शन कर उन शास्त्रों का उद्धार किया।

इच्छन् साम्राज्यमार्याणाम् ऋषिर्वेदं प्रसारयन्।
विश्वमार्यं चिकीर्षंश्च विचचार महीतले ।।७

उस ऋषिवर की इच्छा थी कि समस्त भूमण्डल पर आर्यों का साम्राज्य होकर वेदों का प्रसार हो और सारा संसार आर्य (श्रेष्ठ) बन जावे। इसी उद्देश्य को लेकर वे पृथ्वीतल पर विचरते रहे।

—आचार्य विश्वश्रवाः
ऋग्वेद महाभाष्य की प्रस्तावना में

———

(२३) महर्षि-वन्दना

सुतर्केणाविद्यातमसि बहुदोषेषु पतिता-
मिमां हिन्दुजातिं प्रगतिपथगां यो हि कृतवान्।
चतुर्वेदोद्धर्ता विबुधजननेता सहृदयो,
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।।

अविद्यारूपी अंधकार तथा अनेक दोषों से ग्रस्त इस हिन्दू जाति को अपने सुन्दर तर्कों के द्वारा जिन्होंने प्रगतिपथ पर चलाया, जो चारों वेदों के उद्धारकर्ता विद्वानों के नेता तथा सहृदय थे, वे स्वामी दयानन्द मेरे नेत्रपथगामी होवें।

स्वहिन्दीभाषायाः जगति किल यश्चोन्नतिपरः।
स्वदेशार्थे प्राणान् झटिति हि निजानत्यजदहो।
महर्षिर्निर्भीकः प्रमुदितमनश्चाक्षययशो,
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।।

जिन्होंने अपनी भाषा हिन्दी का संसार में प्रचार किया तथा स्वदेश के लिए अपने प्राणों को अविलम्ब त्याग दिया। ऐसे निर्भीक, प्रसन्न मनवाले तथा अक्षय यशवाले महर्षि स्वामी दयानन्द हमारे नेत्रपथगामी हों।

—पं० यज्ञदत्त अक्षय

o——o

(२४) दयानन्द-षट्कम्

(शिखरिणी छन्द)

महात्मानं लोकत्रयविदितकीर्तिं यतिवरं
निधानं विद्यानामखिलतपसामालयमिव।
श्रुतीनामावासं गुरुवरमिवाशेषजगतां
दयानन्दं वन्दे क्षितितलनिलीनेन शिरसा ।। १

भूमि तक सिर झुकाकर मैं उन दयानन्द को प्रणाम करता हूं जिन यतिवर महात्मा की कीर्ति तीनों लोकों में फैली हुई है, जो समस्त विद्याओं के भण्डार

तथा तपस्या के आगारतुल्य थे। जो वेदों के आश्रय तथा सम्पूर्ण संसार के शिक्षक थे।

अहो धन्यः कोऽयं नववयसि योऽयं गृहसुखम्।
समृद्धं प्रेमाणं पितुरपि जनन्याश्च विपुलम्।
परित्यज्य प्राज्यं धननिचयपूर्णञ्च भवनम्।
अरण्यानीं याति प्रखरतरवैराग्यवशतः॥ २

अहा यह कौन धन्यपुरुष है जो नवआयु में ही गृहसुखों को त्याग कर, माता-पिता के विपुल प्रेम को छोड़कर तथा धन्यधान्य से परिपूर्ण परिवार को लात मारकर प्रखर वैराग्य के कारण अरण्यवासी हो रहा है।

अहो पारेगंगं प्रमुदितविहगं घनवनं
हिमानीभिः शीत नगपतिममुं प्रांशुशिखरम्।
दधानः कौपीनं न खलु निदधानोऽपरपटम्।
न जानीमः कोऽयं प्रविशति तपस्तप्तुमभयम्॥ ३

अहा, गंगा के उस पार जहां चहचहाते पक्षियों से परिपूर्ण जंगल हैं। हिमालय की ऊंची चोटियां जहां सदा बर्फ जमी रहती है, इन शीतल प्रदेशों में तप करने के लिये उद्यत यह कौन है जो कौपीनमात्र वस्त्र धारण कर निर्भय भाव से विचर रहा है।

प्रणम्यो लोकानां निधिरयमशेषस्य महसः।
समुद्धर्तुं लोकान् धृतपरिकरोऽयं मुनिवरः।
अयं विद्वानेकः प्रभवति जगच्छिक्षणविधौ
दयानन्दोऽयं यो भुवि सकलपाखण्डदलनः॥ ४

ये दयानन्द स्वामी समस्त लोकों के वंदनीय हैं तथा परम तेजस्वी हैं। इन्होंने संसार का उद्धार करने हेतु कमर कसी है। संसार को शिक्षा देने में समर्थ ये विद्वान् दयानन्द संसार के समस्त पाखण्डों को नष्ट करनेवाले हैं।

यमालोक्य प्रातस्त्यजति जनताऽघं निशिकृतम्
यदीया वाणी च श्रुतिपथगता हन्ति दुरितम्।
कथं वर्ण्यौ तस्य प्रखरतरपुण्यौ च चरणौ
ययोरेषा मृत्स्ना हरति किल कृत्स्नामपि रुजम्॥ ५

जिनका प्रातःकालीन दर्शन लोगों के निशिकृत पापों को नष्ट करता है। जिनकी वेदपथगामिनी वाणी दुरितों को नष्ट करती है। इनके प्रखर पुण्यों का

वर्णन कैसे किया जा सकता है ? इनके चरणों की वन्दना से रोग शोक आदि नष्ट होते हैं।

अनाकृष्टा भोगैर्नियतबहुरोगैर्यदि वयं
तपःश्रद्धोपेताः सततमनुगच्छामस्तमृषिम्।
ततोऽस्माकं जन्म व्रजतु किल साफल्यमभितः
समृद्धं सौभाग्यं भवतु नितरां भारतभुवः ॥ ६

यदि हम लोग भोगविलास से पृथक् रहकर तप और श्रद्धापूर्वक उस ऋषि का अनुसरण करें तो निश्चय ही हमारा जीवन सफल होगा और भारत भूमि पर सौभाग्य एवं समृद्धि की वर्षा होगी।

पं० जनमेजय विद्यालंकार
—अभिनवकाव्यम् से संगृहीत

o——o

(२५) देवदयानन्दचरमपरमादेशः

गुरुमतं चरितमनुशासितम्
अधिगतं च प्रियं प्रभुसंसृतम्।
निखिलविश्वकृते मम जीवितम्
मनसि मे न हि किंचिदवस्थितम् ॥ १

आर्यो ! मैंने अपने गुरुदेव की आज्ञा का पालन किया। प्रभु की कल्याणी वाणी वेदज्ञान को पढ़ा। सब संसार की सेवाहित जीवन दान दिया। अब मेरे मन में कोई अभिलाषा नहीं है।

द्वाराण्यावृतकपाटानि कुर्वन्तु यतमानसाः।
आर्या अर्यप्रियाः सर्वे तिष्ठन्तु मम पृष्ठतः ॥ २

आर्यजनो, अब सारे द्वार खोल दो और मेरे पीछे आकर खड़े हो जाओ।

यात्रां पूर्णां विधायात्र लोके गच्छाम्यहं खलु।
मोदमानो निचिन्तश्च कृतार्थो धर्मसंगतः ॥ ३

मैं अपने जीवन की यात्रा पूरी करके अब निश्चिन्त, प्रसन्न तथा धर्मनिष्ठ होकर अन्य लोक को प्रस्थान करता हूं।

न स्मराम्यात्मपितरौ जन्मभूमिमथो धनम् ।
न चापि बांधवांल्लोके सर्वं त्यक्तं प्रसादतः ।। ४

मुझे न अपने माता पिता का ध्यान है, न जन्मभूमि, न भाई बन्धु और न धन का विचार है। ये सब तो मैं स्वयं प्रसन्नतापूर्वक छोड़ चुका हूं।

ईश एव प्रियो लोके परमात्मा समुपासितः ।
स हि ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च तस्माद् ऋते न किंचन ।। ६

मेरे लिये तो वह परमात्मा ही सबसे प्यारा है। वही महान् व श्रेष्ठ है उससे बढ़कर मेरे लिए और कुछ नहीं है।

अयि जनेश परेश पूजनीयोऽसि देवैः
मम मनसि सदैव तिष्ठसि त्वं पिता मे ।
न हि भवति ममाशा पूरिता स्यात्तवाशा
अयि ललितसुलील संतो ध्यानगम्यः ।। ६

पिता प्रभो ! आप पूजनीय हैं। मेरे पिता बनकर आप मेरे मन में सदा विराजते हैं। मेरी कोई आशा नहीं है, प्रभो तेरी इच्छा पूर्ण हो। हे लीलाकर तेरी सुन्दर लीला है। मैं तेरा हूं तेरी इच्छा पूर्ण हो।

श्रुतिमयं विततं सततं भुवि
ननु सदार्यजना विदितं भवेत् ।
अथ च वेदप्रचारपरायणाः
भवत सम्प्रति मे वचनं परम् ।। ७

आर्यो, वेद के प्रकाश का विस्तार करना। वेदप्रचार में लगे रहना। यही मेरा अन्तिम सन्देश है।

अस्मिन् विषमबहुले तमोरूपे परे युगे ।
वेदज्ञानप्रचाराय आस्मिन्हव्या जुहोतन ।
धनं देयं मनो देयं देयं च जीवितं प्रियम् ।
दिव्यदेवस्य सन्देशे वेदार्थमखिलं भवेत् ।। ८

आज के भोगवादी अन्धकारपूर्ण युग में आप लोग वेदज्ञान के प्रचारार्थ

अपनी आहुति दे दें। धन, मन, जीवन तथा अपनी प्रिय वस्तु भी दे दें। यही दिव्यदेवता दयानन्द का सन्देश है।

पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री
आर्यजगत् ऋषि निर्वाण अंक १९६४ ई०

०——०

(२६) गुरुदक्षिणा

दण्डी विरजानन्द की मनोकामना

न याचे सुवासो न वासाय वासम्
न वै भोजनं मानसस्यानुरूपम्।
न वित्तं प्रमत्तं जनं यत् करोति
लवंगं मदंगं प्रियं नैव याचे॥ १

न मैं सुगन्धित पदार्थ चाहता हूं और न रहने के लिए सुन्दर भवन, न मनोनुकूल भोजन न धन जो मनुष्य को पागल बना देता है और न अपने मनपसन्द लौंग ही चाहता हूं।

अहं कामये वेदकार्ये प्रचारे
निजं जीवितं चाहुतं यः करोति।
इयं वेदपाठस्य ज्वाला प्रशान्ता
समिच्चात्मरूपा भवेदत्र को वः॥ २

मैं चाहता हूं ऐसा शिष्य जो वेद का प्रचार विश्व में कर सके और इसके लिये अपने पवित्र जीवन की आहुति दे। यह वेदपाठ की अग्नि आज शान्त हो चली है, इसे जो आत्मरूप दे सके? क्या आप में से कोई ऐसा है?

दयानन्द की भीषण प्रतिज्ञा—

तदा शिष्यवर्गस्तु मौनं चकार
दयानन्ददेवो गुरुं संजगाद।
इदं जीवनं यौवनं वेदकार्ये
प्रदत्तं मया कल्परूपं पुनीतम्॥ ३

तब सभी शिष्य मौन होगये पर यतिवर दयानन्द गुरु जी से बोले—मेरा यह कल्पतुल्य जीवन और जवानी वेदप्रचार के लिये समर्पित है।

इदं वेदज्ञानं प्रियं प्राणरूपं
सदा जीवितं जीविते मे पवित्रम्।
दिनं वा निशा वा यथा कालयोगः
गुरो! वेदकार्यप्रसारं करिष्ये ॥ ४

यह वेदज्ञान मुझे प्राणों के समान प्रिय है। यह पवित्र ज्ञान मेरे जीवन के साथ जीवित रहेगा। दिन हो या रात अथवा जैसा भी समय होगा, गुरुदेव मैं वेदप्रचार का कार्य करूंगा।

न चिन्ता जनानां कुलानां न चिन्ता
न चिन्ता पशूनां वनानां न चिन्ता।
न कालस्य चिन्ता न व्यालस्य चिन्ता
न चैवास्त्रचिन्ता न मे शस्त्रचिन्ता ॥ ५

वेदप्रचार के कार्य में मुझे लोगों, परिवार, पशु, वन, काल, सर्प, अस्त्र-शस्त्र आदि किसी की चिन्ता या भय नहीं है।

जनश्चापि क्रीतो गणश्चापि क्रीतः।
धनञ्चापि क्रीतं बलञ्चापि क्रीतम्।
इदं वीक्ष्य शोकाकुलो देवमूर्तिः
स वेदस्य ज्योतिप्रसारे जगाम ॥ ६

अंग्रेजों के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति तथा समूह के समूह खरीदे जा चुके हैं, धन भी हथिया लिया गया है और बल पर भी वे अपना कब्जा कर चुके हैं। यह सब देखकर देवमूर्ति दयानन्द वेदज्ञान के प्रसार में लग गए।

घटा तामसीयं समन्तात्प्रयातु
महाकालभूतोऽपि वातः प्रवातु।
इयं यातना विश्वतापं ददातु
परन्तु पदं मे प्रयातु प्रयातु ॥ ७

चाहे यह काली घटा चारों ओर से घिर आए। वायु महाकाल बनकर बहने लग जाए। चाहे संसार का सारा दुःख मुझ पर आ पड़े, परन्तु मेरे पग आगे ही बढ़ते जायेंगे।

इदं श्वासकार्यं रतं वेदकार्ये
शरीरं तथा वेदनिष्ठाप्रचारे।
इदं मे मनो वेदमन्त्रे विचारे
इयं शब्दवाणी रता वेदसारे ॥ ८

मेरा यह प्रत्येक श्वास वेद कार्य में रत रहेगा। मेरा यह शरीर और वेद के प्रति मेरी निष्ठा इसके प्रचार में लगेगी। मेरा यह मन वेद मन्त्रार्थ विचार में तथा मेरी यह वाणी वेदप्रसार में लगी रहेगी।

यदा दीपमाला प्रकाशं करोति
तदा ज्ञानसूर्यः शरीरं जुहोति।
अयं वेदभानुस्त्रिलोके विभातु
जनो वेदकार्येषु वित्तं ददातु ॥ ९

ज्यों ही दीपावली प्रकाशित होती है, यह ज्ञान सूर्य-दयानन्द अपने शरीर की आहुति दे देते हैं। भगवान् करे यह वेदमार्तण्ड तीनों लोकों में प्रसिद्ध हो और लोग वेदप्रचार के लिए धन दें।

सरतु सरतु लोके वेदज्योतिः पुनोतम्
चरतु चरतु नित्यञ्चार्यलोको विशोकः।
हरतु हरतु शम्भुस्तामसं विश्वरूपं
तरतु तरतु तापं वेदज्ञानप्रसादात् । ११

पवित्र वेदज्ञान विश्व में फैले, आर्य लोग शोकरहित होकर विचरण करें। परमपिता परमात्मा संसार के अज्ञानरूपी अन्धकार का हरण करें। वेद ज्ञान की कृपा से लोग समस्त दुःखों को पार कर जायें।

ददौ प्रियं जीवितमेव सर्वं
वेदप्रचाराय शुभाय देवः।
रुद्धं पदं यस्य न विघ्नकाले
स्वामी दयानन्द इतीह मान्यः ॥ ११

जिस देवता ने अपना सारा ही जीवन शुभ वेदप्रचार के लिए दे दिया। आपत्तिकाल में भी जिसके पग कभी नहीं रुके। ऐसा वह स्वामी दयानन्द हम सबका पूज्य है।

तेपे तपो यश्च योगं
तत्याज विश्वस्य समस्तभोगम्।

सौन्दर्यसूत्रैर्न चचाल चेतः
वन्द्यैः सुवन्द्यः ननु वन्दनीयः ।। १२

जिसने तपस्या की, योग की साधना की, विश्व के समस्त भोगों को छोड़ा, जिसका चित्त सुन्दर चीजों से भी चलायमान नहीं हुआ। पूजनीयों से भी पूजनीय वह स्वामिवर्य अवश्य वन्दनीय है।

यस्यापिधानं भुवि वेद एव
यस्योपवासो ननु दिव्यवेदः ।
वेदः पिपासा च क्षुधापि वेदः ।
श्वासे च वेदो ननु तस्य साधोः ।। १३

जिस यतिराट् का वेद ही पृथ्वी पर बिछौना था, जिसका उपवास भी वेद ही था। वेद ही भूख और प्यास रहा। जिस साधु के श्वास श्वास में वेद था, वह हम सबका पूज्य है।

वेदस्य केतुं करयोर्गृहीत्वा
आकाशमध्ये नितरां बभासे ।
सर्वत्र वेदञ्च ददर्श धीमान्
स्वामी दयानन्द इतीह पूज्यः ।। १४

स्वामी दयानन्द सरस्वती वेद की पताका को दोनों हाथों से मजबूती से पकड़कर संसार में सुशोभित हुए। उस विद्वान् को सब जगह वेद ही वेद दिखाई देता था। ऐसे वे स्वामी दयानन्द हमारे पूज्य हैं।

वातेषु घोरेषु हिमालयो यः
गाम्भीर्यभावे ननु सागरश्च ।
सिद्धान्तवादे ध्रुवधीरचेताः
यतिर्महात्मा श्रुतिकार्यदक्षः ।। १५

जो विरोधरूपी भयंकर आंधी के सामने हिमालय की तरह अडिग रहे और गम्भीरता के मानो सागर ही थे। शास्त्रार्थ में जो धैर्यशाली रहे, ऐसे यह वेद कार्य में पारंगत यति हम सबके पूज्य हैं।

दीप्तेषु दीपेषु प्रशान्तदीपिः
सा दीपमाला मनुजान्ब्रवीति ।
प्रत्यर्पितं येन समस्तमत्र
निर्वाणसंज्ञां स समाप योगी ।। १६

दीपों के प्रकाशयुक्त हो जाने पर, प्रशान्त लौवाली यह दीपमाला सब मनुष्यों को सन्देश दे रही है कि जिसने अपना सब कुछ समर्पित कर रखा था, वह योगिवर दयानन्द आज निर्वाण संज्ञा को प्राप्त होगया है।

तस्यास्ति संदेश इतीह श्रेयान्,
वेदस्य कार्यं हि पुनीतदिव्यम्।
धनैर्बलैश्चापि मनोभिरार्याः
वेदप्रसाराय भवन्तु दक्षाः ॥१७

उस महात्मा का श्रेष्ठसंदेश हमारे लिए यह है कि वेदप्रचार का कार्य परम पवित्र है इसलिये हे आर्यो, धन, बल और मनोयोग से इस वेदप्रचार के कार्य में लग जाओ।

—प० त्रिलोकचन्द शास्त्री

—०—

(२७) मुनिवर–प्रशस्तिः

श्रुतिपरो भवनाथपरायणो
द्युतिभरो जनतापहरो वरः ।
शुभविचारधरो विजितेन्द्रियो
जयति दिव्यनरो बुधवन्दितः ॥१

वेदज्ञान से युक्त, ईश्वरपरायण, द्युतिमान्, जनता के तापों को दूर करनेवाले, जितेन्द्रिय, बुद्धिमानों से वन्दित उस दिव्य पुरुष दयानन्द की जय हो।

जगति वेदप्रचारमखं शुभम्
कृतमनेन प्रियं निजजीवितम् ।
तदनुसारि मनोवचनं कृतम्
जयति दिव्यवरो नरमण्डितः ॥२

संसार में वेदप्रचाररूपी शुभ यज्ञ को ही जिन्होंने अपने जीवन का प्रमुख लक्ष्य बनाया। उन नरतनधारी दिव्य ऋषि की विजय हो।

भवरतं विततं च तमोघनं
हरणकार्यकरो विविधं परम् ।
पथि चकार भयं न कुतोपि यो-
जयति देवसमो भवशंसितः ॥३

जिसने संसार में परिपूर्ण अन्धकार के नाशहेतु विविध कार्य किये। मानव जाति के हित के लिये भयरहित पथ का निर्माण किया। उन संसार के पूज्य स्वामी दयानन्द देव की जय हो।

विततजालमदो मतवादिनाम्
अपनयञ्छ्रुति मंत्रदिवाकरात् ।
निगमवासरतो हि क्षपा गता
जयति ज्ञानभरो बुधवंदितः ॥४

जिन्होंने वेदमंत्ररूपी सूर्य का प्रकाश कर मतवादियों के जाल को छिन्न-भिन्न कर दिया। वेदरूपी दिन के प्रकाशित होने पर अन्धकार की रात्रि व्यतीत हो गई। ऐसे ज्ञान से परिपूर्ण बुद्धिमानों से वंदित दयानन्द की जय हो।

गुरुजनादवलम्बितज्ञानभाः
सकलविश्वजनार्थमवाकिरन् ।
निरतमेव रतो विरतो भवात्
जयति देववरो जनवंदितः ॥५

जिन्होंने अपने गुरुजनों से प्राप्त ज्ञान को विश्व के समस्त लोगों के हितार्थ विकीर्ण किया। जो संसार से विरक्त होने पर भी उसके कल्याण एवं मंगल चिन्तन में निरन्तर रत रहा, वह जनवंदित देववर दयानन्द विजय प्राप्त करे।

निगमभाष्यकरो निगमप्रियो
निगमज्ञानप्रसारपरायणः ।
निगम एव बभूव सुजीवितम्
जयति देवपरो बुधवंदितः ॥६

वेदों के भाष्यकार, वेदों के प्रेमी, वेदों के ज्ञान के प्रसार में निपुण, वेद ही जिनके जीवन का आधार बन गया था, ऐसे बुद्धिमानों से वंदित दयानन्द देव की जय हो।

जगति जीवकुलं निखिलम् ततम्
सुखमनारतमस्य हि याचकः ।

अथ ददौ निज जीवितमत्र यो
जयति देवजनो नरमण्डितः ॥७

संसार में जितने प्राणी हैं वे सब सुखों के ही इच्छुक हैं। उनके सुखार्थ जिसने अपना जीवन भी दे दिया वे देवपुरुष दयानन्द विजयी हों।

यतिवरो गतिदो नितरां सुधीः
वचनभावभरो भुवि लेखकः।
गतभयो बलधर्मप्रसाधको
जयति देवपरो जनशंसितः ॥८

अत्यन्त बुद्धिमान् यतिवर जो वाणी तथा भावों से पूर्ण लेखक थे, जिनमें भय का लेशमात्र भी नहीं था। जो धर्म के साधक थे, ऐसे जनवंदित देवतुल्य दयानन्द की जय हो।

निगमकार्यपरा निखिलार्यकाः
भवत वेदप्रचारपरायणाः।
ददत एव निजं प्रियसाधनम्
इति दिदेश वचः परमं शुभम् ॥९

जिन्होंने आर्यों को वेद कार्य करने तथा वेदप्रचार में लगने की आज्ञा दी। यही उनका शुभ आदेश था।

वियति मेघघटा विषमागता, भवदशा बहुपापसमाचिता।
अवतरन्तु समग्रबला बुधा, निरसनाय भवस्य तमोघनम् ॥१०

आज भी आकाश में विषम मेघ घटाएं छाई हैं। ससार की दशा पापपूर्ण हो गई है। अतः हे बुद्धिमान् जनो, आप लोग घने अन्धकार को नष्ट करने के लिए समग्र बल से जुट जायें।

पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री

——

(२८) महर्षि-चरितामृतम्

नानाविधैर्मतमतान्तररूढिवादैः,
श्रुत्युक्तमार्गमखिलञ्च तिरोबभूव ।
तस्यावनाय पुनरेव बभूव भूमौ,
आनन्दपश्चिमपदश्च दयाभिधेयः ॥१

नाना मतमतान्तरों के रूढ़िवाद से सम्पूर्ण वेदोक्तमार्ग तिरोहित हो गया था। उसकी रक्षा और पुनरुद्धार के लिए दयानन्द पृथिवी पर अवतरित हुए।

पाखण्डिनां मानविमर्दनाय,
वेदोक्तधर्मस्य च रक्षणाय ।
क्षितावतीर्णः समुदारमूर्तिः,
स्वामी दयानन्दयतीन्द्रवर्यः ॥२

पाखण्डियों के मान के मर्दन के लिए और वेदोक्त धर्म की रक्षा के लिए यतीन्द्रवर उदारमुनि स्वामी दयानन्द पृथिवी पर अवतरित हुए।

औदीच्य सद्द्विजकुले स हि जन्म लेभे
वंशक्रमेण भवभक्तिसमन्वितोऽभूत् ।
कालान्तरेण शिवरात्रिमहोत्सवेऽसौ,
जाग्रत्समस्तरजनीमनयद् व्रतेन ॥३

उसने श्रेष्ठ ब्राह्मणों के औदीच्य नामक कुल में जन्म लिया। वंशक्रमागत शिवोपासक हुआ। कालान्तर में शिवरात्रि के महोत्सव में उसने व्रत के कारण रात्रिजागरण किया।

देवालयं ह्यधिवसज्जनकेन सार्धम्,
तत्राश्ममूर्तिपरिकल्पितशम्भुदेवे ।
दैवात् कुतोऽपि खनकः समुपागतश्च,
तस्य क्रियां समवलोक्य कृतो विमर्शः ॥४

देवालय में पिता के साथ जागरण करते हुए पाषाणमूर्ति-कल्पित महादेव पर दैववश कहीं से चूहा चढ़ आया। उस चूहे की क्रिया (अक्षत आदि भक्षण) देखकर दयानन्द ने विचार किया।

यो ह्यस्य सर्वजगतः प्रतिपालकोऽस्ति,
यः सर्वभूतहृदयेषु च सन्निविष्टः ।
यो निर्विकारजगदीशजगन्नियन्ता,
यः सर्वशक्तिसहितोऽपि निराकृतिश्च ॥५

जो इस सारे जगत् का पालक है । जो समस्त भूतों के अन्दर सन्निविष्ट है । जो जगदीश जगन्नियन्ता निर्विकार है । जो सर्वशक्तिमान् होता हुआ भी आकाररहित है ।

येनाखिलं जगदिदं रचितं स्वशक्त्या,
व्याप्य स्थितोऽस्ति सकलं स चराचरञ्च ।
योऽनादिरव्ययवपुर्जगदन्तरात्मा,
सेवाश्ममूर्तिरचना भवितुन्न शक्या ॥६

जिसने अपनी शक्ति से इस सम्पूर्ण जगत् को बनाया है । जो इस सम्पूर्ण चराचर जगत् में व्याप्त है । जो अनादि अव्यय जगत् का अन्तरात्मा है, वही पत्थर की मूर्ति के रूपवाला नहीं हो सकता ।

इत्थं विमृश्य मनसा प्रविचिन्तयन् सः
सत्यं शिवं मृगयितुं सततं सुलग्नः ।
निःश्रेयसाय निखिलञ्च सुखं विहाय
त्यक्त्वा समृद्धसदनं च वनं प्रतस्थे ॥७

इस प्रकार मन से विचार करके सत्य शिव के अन्वेषण में जुट गये और मोक्ष की प्राप्ति के लिए समस्त ऐहिक सुखों को और धन्यधान्य से परिपूर्ण घर को छोड़कर वन में चले गये ।

भ्रमन्ननेकानि वनान्युदीच्यां
नगाधिपते चाहिशुचिप्रदेशे ।
गुहां समाश्रित्य सुदीर्घकालं
समाधिमास्थाय तपः प्रतेपे ॥८

इस प्रकार अनेक वनों में भ्रमण करते हुए उत्तर में वर्तमान नगाधिराज हिमालय के अत्यन्त पवित्र प्रदेश में गुहा में रहकर दीर्घकाल तक समाधिस्थ होकर तप किया ।

ततस्पवस्वो मृगयन् महान्तं
विद्वन्मणिं विज्ञगुरुं प्रकाण्डम् ।

प्रज्ञानचक्षुश्च सुपुण्यकीर्तिम्
श्रुत्वा सहर्षं मथुरामवाप ॥८

तब वह तपस्वी, महान् विद्वन्मणि गुरु को ढूंढ़ने लगे। पुण्यकीर्ति, प्रज्ञा-चक्षु विरजानन्द का नाम सुनकर हर्षपूर्वक वे मथुरा आये।

लब्ध्वा गुरुं योग्यतमं स भक्त्या
अनन्यवृत्या च परं सिषेवे।
मेधाविशिष्यस्य विशिष्टभक्तिम्
दृष्ट्वा गुरुः सातिशयं तुतोष ॥१०

योग्यतम गुरु को प्राप्त कर उसने भक्ति तथा अनन्य भाव से उसकी सेवा की। मेधावी शिष्य की विशिष्ट भक्ति को देखकर गुरु अत्यन्त सन्तुष्ट हुए।

गुरुं समाराध्य विशेषभक्त्या
अशेषविद्याश्च समाप्य वर्णी।
कृतज्ञताभारभरेण नम्रः
गुरुं ययाचे गुरुदक्षिणायै ॥११

गुरु की विशेषभक्तिपूर्वक आराधना कर उस ब्रह्मचारी ने अशेष विद्या प्राप्त कर ली। पुनः कृतज्ञताभार से भरकर गुरु से दक्षिणा मांगने की प्रार्थना की।

अकिंचनोऽहं गुरुदेव देये
न निष्कृतिर्मे भवतः कदापि।
अतः कृपालो मयका प्रदाना-
नेतल्लवङ्गानुररीकरोतु ॥१२

हे गुरुदेव मैं अकिंचन हूं। अतः हे कृपालो, मेरे द्वारा प्रस्तुत इन लौंगों को स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करें।

शिष्यस्य सद्भावमपूर्वभक्तिम्
ज्ञात्वा सहर्षं गुरुरित्युवाच।
वत्स! प्रसन्नोऽस्मि सपर्यया ते
न चास्त्यपेक्षा गुरुदक्षिणायाः ॥१३

शिष्य की सद्भावनापूर्वक भक्ति को देखकर हर्षपूर्वक गुरु बोले पुत्र मैं तुम्हारी सेवा से प्रसन्न हूं। मुझे गुरुदक्षिणा की अपेक्षा नहीं है।

चिरादविद्यातिमिरग्रहेण
ग्रस्तो ह्ययं प्रोज्ज्वलभारतेन्दुः ।
तद्वारणस्य क्रियतां प्रतिज्ञा
इयं हि स्याद् भूरि च दक्षिणा ते ।।१४

चिरकाल से अविद्यारूपी अन्धकार से प्रोज्ज्वल भारत का चन्द्रमा ग्रस्त हो रहा है। इसके निवारण की प्रतिज्ञा करो यही तुम्हारी सुन्दर दक्षिणा होगी।

ग्रन्था ह्यनार्षा रचिताश्च धूर्तैः
तेषां प्रसारो विनिवार्यः सम्यक् ।
पुरातनैराप्तजनैः कृतानां
लोके प्रचारं कुरु वत्स नित्यम् ।।१५

धूर्त पुरुषों ने अनार्ष ग्रन्थों की रचना की है, इनका निवारण करना आवश्यक है। हे वत्स, तुम पुरातन आप्त पुरुषों द्वारा रचित ग्रन्थों का लोक में प्रचार करो।

कायेन वाचा मनसा सदैव
देशस्य कल्याणमथाचरेस्त्वम् ।
इत्थम्भवेच्चोत्तमदक्षिणा ते
भद्रञ्च भूयादिति मे शुभाशीः ।।१६

मन, वाणी और कर्म से देश के कल्याण का चिन्तन करते हुए भ्रमण करो। यही तुम्हारी उत्तम दक्षिणा होगी। मेरा शुभाशीर्वाद ग्रहण करो।

गुरोरनुज्ञां शिरसाभिधार्य
प्रणम्य पादौ च मुहुर्यतीन्द्रः ।
श्रद्धान्वितः सानुनयं बभाषे
विधातुमाज्ञां भवतो यतिष्ये ।।१७

गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर तथा उनके चरणों में प्रणाम कर श्रद्धायुक्त हो, अनुनयपूर्वक बोले—मैं आपकी आज्ञापालन करने का यत्न करूंगा।

गुरो ! जगत्यां किमदेयमस्ति
विद्याप्रदानेन सुजन्मदात्रे ।
सर्वं समर्प्यापि च देहदानम्
स्वल्पं तथा स्यात्किमु वान्यदानैः ।।१८

हे गुरुवर, इस संसार में विद्या दान करनेवाले तथा जन्म देनेवाले के लिए

कुछ भी अदेय नहीं होता। यदि देह का भी समर्पण कर दिया जाये तो भी वह स्वल्प दान ही होगा।

प्रभोर्वचोऽहं प्रतिपालयिष्ये
यावच्छरीरे मम सन्ति प्राणाः।
एवं हि स्यां चेज्जगतां विरोधी
विचालयिष्यामि पदं न सत्यात् ॥१९

हे प्रभो, मैं आपके वचनों का पालन करूंगा जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं। चाहे सम्पूर्ण संसार ही मेरा विरोधी क्यों न हो जाये, मैं सत्य के पद से विचलित नहीं होऊंगा।

इदं प्रतिज्ञाय गुरुञ्च नत्वा
गतो हरिद्वारमसौ विशंकः।
आरोपयामास च तत्र कुम्भे
पाखण्डखण्डिन्यभिधां पताकाम् ॥२०

इस प्रतिज्ञा के पश्चात् गुरु को प्रणाम कर स्वामी दयानन्द निश्शंक भाव से हरिद्वार चले गये तथा वहां कुम्भ के मेले में पाखण्ड खण्डनी पताका की स्थापना की।

गुरोः समक्ष च कृता प्रतिज्ञा
तथैव तस्याश्च चकार पूर्तिम्।
घोराणि कष्टान्यपि चानुभूय
न्याय्यात्पथो नो विचचाल धीरः ॥२१

स्वामी दयानन्द ने गुरु के समक्ष जो प्रतिज्ञा की थी, उसको पूरा किया घोर कष्टों को अनुभव करके भी वे धीर पुरुष न्याय के मार्ग से कभी विचलित नहीं हुए।

—पं० ब्रह्मानन्द शास्त्री, साहित्याचार्य
कासगंज (एटा)

---

(२९) श्रीमद् दयानन्द-पञ्चकम्

मनस्वी मेधावी श्रुतिवचनभाषी प्रभुरतः
तथैवात्मज्ञो वै यम-नियमचारी व्रतधरो।
विरक्तो वैराग्ये जगति त्रयतापं शमयितुम्
दयानन्दः स्वामी सकलजनवंद्यो विजयताम् ॥ १

जो अत्यन्त मनस्वी, मेधावी, वेदों के वचनों का उच्चारण करनेवाले, परमात्मा में दत्तचित्त, आत्मज्ञ, यम नियमों का पालन करनेवाले तथा व्रतधारी थे। जो विरक्त तथा वैराग्यवान् थे। जिन्होंने संसार के तीनों तापों का शमन किया—ऐसे दयानन्द स्वामी सब लोगों के लिये वन्दनीय हैं, उनकी विजय हो।

शिवं सत्यं ध्येयं व्यरचत निजं सुन्दरतरम्
पताकां कीर्तेः स्वां नभसि विमलां यो व्यतनुत।
स्वदेहन्दीनानामुपकृतिपथे चाऽगमयत्
दयानन्दः स्वामी त्रिविधभयहारी विजयताम् ॥ २

जिन्होंने अपने लक्ष्य को सत्य, शिव एवं सुन्दर से परिपूर्ण बनाया, जिन्होंने अपनी निर्मलकीर्तिपताका को आकाश में लहराया, अपनी देह को दीनों के उपकार के पथ पर चलाया, ऐसे दयानन्द स्वामी त्रिविध भय को दूर करनेवाले हैं, उनकी विजय हो।

तमस्तोमे व्याप्ते निखिलभुवने योऽतिगहने
प्रकाशो वेदानां मनुजनुजुषान्तः प्रकटयन्।
प्रभाभिः सर्वाभी रविरिव करैस्तीव्रमतिमान्
दयानन्दः स्वामी युगतिमिरहारी विजयताम् ॥ ३

जिस समय समस्त संसार में अतिगहन अज्ञानरूपी अन्धकार व्याप्त था उस समय जिन्होंने वेदों के प्रकाश को प्रकट किया। सूर्य किरणों की प्रभा के तुल्य उन्होंने वेद ज्ञान को प्रकाशित किया। युग के अन्धकार का विनाश करने वाले स्वामी दयानन्द की विजय हो।

सुमन्त्रं स्वातन्त्र्यं वरमिह स्वदेशाय विहितम्
विदेशस्थो राजा सुखमिव न श्रेयान् कथमपि।
स्वदेशस्थः श्रेयानतिकुटिलभावो नरपतिः
दयानन्दः स्वामी जननिपदगामी विजयताम् ॥

जिन्होंने स्वदेश के लिये स्वतन्त्रता के सुन्दर मन्त्र की घोषणा करते हुए कहा कि विदेशियों का राज्य सुखदायक होने पर भी श्रेयस्कर नहीं होता, परन्तु स्वदेशी राजा कुटिलभावापन्न होने पर भी श्रेयस्कर है। ऐसे मातृभूमि के चरण-सेवक दयानन्द की विजय हो।

मतानां वैषम्यं विविधविषयानामतितराम्
यदासीन्मूढानां मतिविरहिणामीशविषये।
स्वतर्कैस्तच्छिन्नं समुचितमिदम्प्राह सदसत्
दयानन्दः स्वामी विदितगुणधामा विजयताम् ॥ ५

विविध विषयों को लेकर मतमतान्तरों में अत्यन्त वैषम्य था, परमात्मा को लेकर मूढ लोगों में अतिभ्रम हो रहा था, स्वामी दयानन्द ने अपने तर्कजाल से सत्य और असत्य का विवेक कर इस मूढ़ता को समाप्त किया। जिनके गुणसमूह प्रकट हैं, वे दयानन्द स्वामी विजय को प्राप्त हों।

श्री नलिन विद्यावागीश
आर्यमित्र ऋष्यंक (१७ नवम्बर १९६३)

०——०

(३०) दयानन्दाय नमः

टंकारेति सदा समृद्धिबहुले मोर्वीप्रदेशस्थिते।
ग्रामे शास्त्रपुराणपाठकुशलैः सुब्राह्मणैः सेविते।
श्रीकृष्णाख्यद्विजगृहं स्वजनुषा यो वै समालोकयत्।
मानार्हाय मनस्विने मुनिदयानन्दाय तस्मै नमः॥

मोरवी राज्य में स्थित टंकारा नामक सदा समृद्ध तथा शास्त्र पुराणादि के पाठ में कुशल ब्राह्मणों द्वारा सेवित ग्राम में जिन्होंने श्रीकृष्ण (करसन जी) नामक द्विज के यहां जन्म लिया, वे सम्मान के पात्र तथा मनस्वी स्वामी दयानन्द हैं, उन्हें हम नमस्कार करते हैं।

पाषाणैरत्याहतोऽपि सुमनाः प्रादात् शुभं सौरभम्।
साक्षान्मातुवसुन्धरेव मनसः सद्भावेदयत्॥

कष्टैर्येन परोपकारव्रतिना सज्जीवन यापितम् ।
श्रद्धेयाय महर्षये गुरुदयानन्दाय तस्मै नमः ॥

जिन्होंने पत्थरों की चोट को सहन करके भी अपने सुमन सौरभ से सबको आनन्दित किया, साक्षात् भूमि माता के तुल्य जिन्होंने सद्भावना एवं सहनशीलता का परिचय दिया। जिस परोपकारी व्रत को धारण करनेवाले ने कष्ट उठाकर भी श्रेष्ठ जीवन यापन किया, ऐसे श्रद्धास्पद गुरु महर्षि दयानन्द को हम नमस्कार करते हैं।

—अज्ञात

o——o

(३१) दयानन्द-स्तुतिः

यो वेदानुददीधरत् क्षितितलादस्तं पिपासूनिव
प्रत्यस्थापयदस्थिरं पुनरपि श्रीधर्मराज्यं च यः ।
यो भव्यामुदभावयत्सुरभुवि स्वाधीनताभावनां
तं श्रद्धाविधिनिर्मिताञ्जलिदयानन्दं नमो योगिनम् ॥ १

जिसने संसार से अस्त होते हुए वेदों का पुनरुद्धार किया, जिसने बिगड़े हुए धर्म के राज्य को पुनः स्थापित किया, जिसने भारत की देवभूमि में स्वाधीनता की लहर चला दी, हम उस योगीश्वर दयानन्द को श्रद्धा से करबद्ध होकर नमस्कार करते हैं।

उद्धर्ता, पावनानामविदितविरलब्रह्मचर्यव्रतानां
संहर्त्तोन्माथिनीनां विधुरितविधवाधेनुशोकावलीनाम् ।
त्राता, श्रीमातृभूमेश्शतदुरितवशाम्मूच्छितस्वच्छकीर्ते-
रादित्यब्रह्मचारी जगति विजयतां श्रीदयानन्दनामा ॥ २

चिरकाल से विलुप्त ब्रह्मचर्यप्रथा को फिर से प्रकाशित करनेवाले, दुःखसागर में डूबी हुई विधवाओं और गौओं के शोकों को काटनेवाले, अपने सैकड़ों खोटे कर्मों के कारण बदनाम मातृभूमि के नाम को पुनः चमकानेवाले,

आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द की संसार में विजय हो।

—म० मुन्शीराम जिज्ञासु
संकलित ऋषि दयानन्द के पत्रव्यवहार के
मुख पृष्ठ के अन्दर के पृष्ठ पर प्रकाशित

०——०

(३२) दयानन्द-प्रशंसा

(वंशस्थवृत्तम्)

दयाकरानन्दविशेषवर्धनात्
जगतीतले यो नितरामुदारधीः।
ततान नामानुगुणां निजाभिधाम्
गुरुर्दयानन्द इति प्रकल्पितम्॥

जो संसार में दया और आनन्द को विशेष रूप से बढ़ाने में अत्यन्त उदार बुद्धियुक्त था। उसने इन्हीं गुणों के अनुरूप अपना नाम भी दयानन्द ही रक्खा।

कर्त्तव्यमेव जगतामुपकारकृत्यम्
विद्वद्वरैरिति विचारयतोस्य चित्ते।
या भूत्तया सकलमेव विचारबुद्ध्या
दिग्मण्डलं समाभिवेष्टितमादरेण॥

उस विद्वद्वर दयानन्द ने विचारपूर्वक संसार के उपकार को ही अपना कर्त्तव्य निश्चित किया। उस विद्वद्वर ने यह धारणा बनाकर कि समस्त प्राणियों में परमात्मा का निवास है, समस्त दिशाओं में समन्वययुक्त चेष्टाएं कीं।

(मालिनीवृत्तम्)

जयतु जयतु लोके वेदसूर्यप्रकाशः
भवतु भवतु पश्चादार्यधर्मप्रभावः।
नयतु नयतु दूरं न्यायकारी दयालु-
र्नरतनगतरोगं नूनमार्याभिवासात्॥

संसार में वेदरूपी प्रकाश की विजय हो। आर्य धर्म का प्रभाव सर्वत्र फैले, न्यायकारी, दयालु परमात्मा आर्यों के निवास से रोगों को दूर रक्खे।

—पं० सत्यमित्र शास्त्री
आर्यमित्र ऋष्यंक २०२१ वि०

०——०

(३३) धन्यो धन्यः श्रीदयानन्दवर्यः

(मन्दाक्रान्ता वृत्तम्)

मौर्वीराज्ये भुवनविदिते काठियावाड़देशे,
टंकाराख्ये निवसथवरे लब्धवान् कोऽपि जन्म।
चत्वारिंशेऽधिकशततमे हायने पूर्वमस्मात्
विख्यातो यो भवति भुवने श्रीदयानन्दनाम्ना ॥ १

लोकप्रसिद्ध काठियावाड़ देश के मोरवी राज्य के अन्तर्गत टंकारा ग्राम में जिसने आज से १४० वर्ष पूर्व जन्म लिया तथा जो लोक में दयानन्द नाम से विख्यात हुआ।

मूर्त्यारूढं खनकनिवहं को न पूर्वं ददर्श,
शैव्या रात्र्या व्रतमपि न कस्तस्य पूर्वं चकार।
किन्तूद्भूता हृदयजलधौ भावभङ्गिस्तदीये
यत्त्रातुं स्वं प्रभवति न यो मूषिकात्किं स ईशः ॥ २

मूर्तियों पर आरूढ़ चूहों को इससे पूर्व किसने नहीं देखा होगा तथा इससे पूर्व भी शिवरात्रि का व्रत किसने नहीं किया होगा, किन्तु इस दयानन्द के हृदय रूपी समुद्र में जो अद्भुत भावतरंगें उठीं, वे सर्वथा विचित्र ही थीं।

दृष्ट्वा कालाकवलिततनुं बाल्यकाले स्वसारं
मृत्युग्रस्तं तदनु दयितं कालपूर्वं पितृव्यम्।
शोकाधिक्यादभवदनघो गाढध्याने निमग्नः
कोऽयं मृत्युर्भवति च कथं मानवो मृत्युमुक्तः ॥ ३

बाल्यकाल में अपनी बहिन की मृत्यु को देखकर तथा अपने पितृव्य (चाचा) को अकालमृत्यु का ग्रास बनते देखकर शोकाधिक्य के कारण जो ध्यानमग्न होकर यह सोचने लगा कि मृत्यु क्यों होती है और मनुष्य उस मृत्यु से मुक्त कैसे हो सकता है ?

वैराग्यात्तं विरतमनसं कर्तुकामेन पित्रा
छित्त्वा पाशानुपयमसमान् बुद्धिपूर्वं प्रयुक्तान् ।
निश्चक्राम प्रियपितृगृहादमृतत्वं विचिन्वन्
को रोद्धुं प्रभवति जनं यो हि मोक्षाभिलाषी ।। ४

जिसे वैराग्य से विमुख करने के लिए पिता ने अनेक प्रयत्न किये, परन्तु बुद्धिपूर्वक उन सभी पाशों को छिन्न-भिन्न कर जो अमृतत्व का अभिलाषी बनकर प्यारे पिता के घर को छोड़कर चला गया । वस्तुत: जो मोक्ष के इच्छुक व्यक्ति होते हैं, उनको रोकना किसके लिए सम्भव होता है ?

उत्तुङ्गाद्रिप्रतिभयवनह्लादिनीर्लंघयित्वा
दृष्ट्वा तांस्तान् प्रथितविदुषो योगलब्धप्रतिष्ठान् ।
तृप्तिं नाप्त: कथमपि तु तैरर्थकामाभिसक्तै:
प्रत्यागच्छत्प्रयतविरजानन्दयोगीश्वरौक: ।। ५

जिसने ऊंचे ऊंचे पर्वतों तथा नदियों को लांघकर योगिजनों तथा विद्वानों का अन्वेषण किया परन्तु अर्थ और काम में आसक्त उन लोगों से उसे तृप्ति नहीं मिली । तब वह (दयानन्द) योगीश्वर विरजानन्द की कुटिया में आया ।

तत्सत्तीर्थान्निखिलनिगमज्ञानपीयूषपूर्ण:
मायामोहकलितविधुरामुद्धरिष्यंस्त्रिलोकीम् ।
स्वान्ते पूर्ण: परमकृपया चण्डरश्मिर्यथाऽन्य:
स्थाने स्थाने भ्रमणमकरोत् ध्वान्तजालं विभिन्दन् ।। ६

उन विरजानन्द का अन्तेवासी बनकर जिसने अखिल वेदज्ञानरूपी अमृत का नाम लिया तथा जो माया मोह से परिपूर्ण तीनों लोकों को अपनी कृपा से सूर्य के तुल्य मुक्त करना चाहता था, वह अन्धकार के जाल को नष्ट करता हुआ स्थान-स्थान पर भ्रमण करने लगा ।

लुप्तान् वेदानुदधरदसौ ब्रह्मचर्यं शशास
पाखण्डानां दलनमकरोत्सत्यभक्तिं दिदेश ।

प्रत्याचख्यौ मृतनिर्वपनं मूर्तिपूजां प्रमाणैः,
सद्विद्यानां वितरणपरे तीर्थबुद्धिं बबन्ध ।। ७

उस महर्षि ने लुप्त हुए वेदों का उद्धार किया, ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी, पाखण्डों का दलन कर सत्य भक्ति का उपदेश दिया, मृतक श्राद्ध तथा मूर्तिपूजा का प्रत्याख्यान किया तथा सत्यविद्या का उपदेश देनेवालों में ही तीर्थबुद्धि रखने का उपदेश दिया।

शूद्रादिभ्यो निगमपठनस्याधिकारं प्रदाय,
कालाद्दीर्घाद्दलितजनतां बंधमुक्तां व्यतानीत् ।
रक्षन्नारीः परमकृपया दास्यमग्नां युगेभ्यः
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। ८

उस महर्षि ने शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार प्रदान किया, दीर्घकाल से दलित जनता को बन्धनों से मुक्त किया, युगों से दासता भोगती नारीजाति की रक्षा की, ऐसे यतिवर दयानन्द धन्यवाद के पात्र हैं।

पुण्ये कार्ये हवनसदृशे लोकलोकान्तराप्ये
मूढैर्लोकैर्निगमवचसा प्राणिनां कल्प्यमानाम् ।
क्रूरं हिंसामुपहितबलैः खण्डयन् स प्रमाणैः
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। ९

यज्ञयागादि जो पुण्य कार्य हैं उनमें मूर्ख लोगों ने वेद की वाणी के आधार पर प्राणियों की क्रूरतापूर्ण हिंसा कल्पित कर रक्खी थी। स्वामी दयानन्द ने उसका सप्रमाण खण्डन किया, ऐसे दयानन्द महाराज हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

लुप्तार्थानां प्रकटनपरान् भाष्यग्रन्थान् प्रणीय
वेदालोकात्परमपुरुषज्ञानविज्ञानभूतात् ।
बहोकालाद्विमुखजगतीं सम्मुखीं संविधाता,
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। १०

परमपुरुष परमात्मा के ज्ञान-विज्ञान से उत्पन्न जो वेद का आलोक था, तथा जिन वेदों का अर्थ लुप्त होगया था, उसे भाष्यग्रन्थों की रचना कर प्रकट किया। बहुत काल से वेदविमुख संसार के सम्मुख जिसने वेदों को उपस्थित किया, वे यतिवर दयानन्द साधुवाद के पात्र हैं।

विश्वात्मानं भुवनजनकं सच्चिदानन्दरूपं
हित्वा देवं जननरहितं निर्विकारं विदेहम् ।
अर्चन्मूर्तीर्भ्रमितभुवनं शिक्षयन्नीशभक्तिं,
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ११

विश्वात्मा, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करनेवाले, सच्चिदानन्द, निर्विकार, अजन्मा, विदेह, परमात्मा को छोड़कर जो संसार के लोग भ्रम से मूर्तियों की पूजा करते थे, उन्हें स्वामी जी ने वास्तविक ईशभक्ति सिखाई। वे निश्चय ही धन्य हैं।

जन्मस्थाने गुणकृतिपरां वर्णरीतिं प्रचाल्य
मर्यादां तां पुनरपि शुभां चाश्रमाणां प्रवर्त्य ।
कायाकल्पं सकलजगतस्साधयिष्यन् महात्मा
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। १२

जन्म के स्थान पर गुण और कर्मों के आधार पर वर्णव्यवस्था का प्रचलन कर जिन्होंने आश्रमों की शुभ मर्यादा का पुनः प्रवर्त्तन किया। इस प्रकार जिस महात्मा ने सारे संसार का कायाकल्प कर डाला, वे स्वामी हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

नानारूपं कुटिलमतिभिर्मोहम्मदीयैस्तथाऽऽग्लैः
मूढान् हिन्दूञ्छलबलयुतं हापयित्वा स्वधर्मात् ।
पादाक्रान्तां प्रियनिजभुवं मोचयन्नात्मशक्त्या,
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। १३

नानारूपवाले कुटिलमति मुसलमान और ईसाई छलबल से मूढ़ हिन्दूजाति को स्वधर्म से हीन कर रहे थे। अपनी शक्ति से जिन्होंने अपने प्यारे देश की भूमि को पादाक्रान्त होने से बचाया, उन दयानन्द स्वामी को हम धन्यवाद अर्पित करते हैं।

अंधीभूतान्स्वविषयजनान् ज्ञानविज्ञानभासा
पाश्चात्यानां प्रतिहतदृशा गौरवं स्वं प्रदर्श्य ।
कुर्वन् युक्ताम् ज्वलननिभया देशभक्त्या स्वबन्धून्
धन्यो धन्यः खलु यतिवरः श्रीदयानन्दवर्यः ।। १४

पाश्चात्य ज्ञानविज्ञान की चकाचौंध से जो स्वदेशवासी अन्धे हो रहे थे, उन्हें निज गौरव दिखाकर जिन्होंने अपने बन्धुओं को प्रचण्ड देशभक्ति से युक्त किया, वे यतिवर दयानन्द निश्चय ही धन्य हैं।

पूर्वं दृष्टाः कति न मुनयो ज्ञानविज्ञानयुक्ताः
ब्रह्मध्याने निरतमनसो विश्वकल्याणकामाः ।
साम्यं तेषां वहति न तु कोऽप्यद्वितीयस्य तस्य
घोरं दात्रे विषमपि मुनेरमृतस्य प्रदातुः ।। १५

पूर्वकाल में ज्ञानविज्ञानयुक्त कितने ही मुनि हो गये हैं, जो ब्रह्मध्यान में लीन तथा विश्वकल्याण की कामना करनेवाले थे, परन्तु इन महर्षि दयानन्द की तुलना में कोई दूसरा नहीं ठहरता, जिन्होंने स्वमारणार्थ घोर विष देनेवाले को भी अमृत प्रदान किया।

सत्यार्थानां प्रवचनपटुं ग्रन्थराजं प्रणिन्ये
संस्थामेकां शुभगुणवतां स्थापयामास श्रेष्ठाम् ।
आनन्दानां विमलसरितो वाहयित्वा स नूनं
क्षेमं तन्वन् खलु विजयते श्रीदयानन्दवर्यः ।। १६

जिन्होंने सत्यार्थप्रकाश जैसे श्रेष्ठ ग्रन्थराज की रचना तथा श्रेष्ठ गुणयुक्त पुरुषों की एक सभा स्थापित की, जिन्होंने आनन्द की विमल सरिता प्रवाहित कर संसार को योगक्षेम प्रदान किया, वे दयानन्द निश्चय ही विजय को प्राप्त होते हैं।

—प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर
गुरुकुल पत्रिका मई जून १९६४

o——o

(३४) दयानन्द–गाथा

पुरा बभूवुर्मुनयो महान्तः पुण्यात्मके भारतवर्षदेशे ।
जगद्धितार्थाहितनित्यचित्ता जाज्वल्यभासश्च तपोधनाश्च ।। १

इस पुण्यशील भारतराष्ट्र में पुराकाल में महान् मुनि हुए हैं जो तपस्वी, तेजस्वी तथा नित्य संसार के हित में ही अपना चित्त लगानेवाले थे।

तपस्विवर्येषु च तेषु कोऽपि तपस्विश्रेष्ठश्च महोग्रतेजाः ।
जातो दयानन्दमहर्षिनामा भास्वान्यथामध्यमणिस्सुराणाम् ।। २

उन तपस्वी श्रेष्ठों में महान् उग्र तेज को धारण करनेवाले महर्षि दयानन्द हुए जो देवताओं के मध्य मणिस्वरूप जाज्वल्यमान थे।

नक्षत्रमूले हि यथाऽजनिष्ट स मूलपूर्वं ह्यभिधानमाप।
स शंकरं ज्ञातिजनप्रसिद्धं श्रीकर्सनेत्थं प्रथितात् स्वतातात्॥ ३

मूलनक्षत्र में जन्म लेने के कारण उसके पिता श्रीकरसन जी ने उसका नाम मूलशंकर रक्खा।

बाल्ये वयस्येव पिता तदीयो दृढ़व्रतश्चातिसुधार्मिकश्च।
तं श्रावयामास शिवस्य शौर्यं विवर्धयिष्यंस्तनयस्य भक्तिम्॥ ४

बाल्यकाल में ही उसके दृढ़ एवं धार्मिक पिता ने उसे शिव के शौर्य और पराक्रम की कथायें सुनाईं जिससे कि पुत्र की शिव के प्रति भक्ति बढ़े।

सुन्दोपसुन्दौ स यथा जघान यथा च लेभे त्रिपुरारिसंज्ञाम्।
निषूदनात्तस्य निशाचराणां तेभ्यश्च रक्षाकरणात्त्रिलोक्याः॥ ५

किस प्रकार भगवान् शंकर ने सुन्द और उपसुन्द नामक राक्षस को मारा तथा किस प्रकार त्रिपुर का वध कर त्रिपुरारि नाम को प्राप्त किया। त्रिलोकी की रक्षाहेतु किस प्रकार उन्होंने राक्षसों का दलन किया, ये सब कथायें मूलशंकर को उनके पिता ने सुनाईं।

अथागता सा शिवरात्रिवर्या व्रतं च तस्यां स दधार घोरम्।
क्षुधां पिपासां परिभूय निद्रां तस्थौ स एकः शिवदर्शनेच्छुः॥ ६

जब शिवरात्रि आई तो उसने घोरव्रत धारण किया तथा शिव के दर्शनों का इच्छुक बनकर भूख और प्यास को जीतकर जागरण करता रहा।

सप्तेषु सर्वेष्वपि पूजकेषु शिवं दिदृक्षुर्न प्रसुप्त एषः।
यतो हि साक्षाद्विधातुमैच्छत् शिवं शिवं विश्वविधायकं सः॥ ७

अन्य सब लोगों के सो जाने पर भी शिवदर्शनाकांक्षी वह नहीं सोया क्योंकि विश्व के विधाता साक्षात् भगवान् शंकर को देखने की उसे इच्छा थी।

गतेऽर्धरात्रे तु ददर्श तत्र शिवं न तं शत्रुविनाशकं सः।
परं जडां निर्बलनिश्चलां तां शिवस्य पाषाणमयीं हि मूर्तिम्॥ ८

अर्धरात्रि व्यतीत होजाने पर भी उसने शत्रुविनाशक शिव को नहीं देखा, परन्तु उसे जड़, निर्बल, पाषाणमयी शिव की प्रतिमा ही दिखाई दी।

उत्कूर्दमानांश्च विलेशयांस्तान् विदूषिताङ्गञ्च विकुर्वतः स्वम् ।
यतः स कर्तुं न शशाक दूरं शिवस्य नास्तीति ततः स मेने ॥ ९

उसने देखा कि एक चूहा शिव प्रतिमा को दूषित करता हुआ कूद रहा है। यतः शिव इसे दूर करने में असमर्थ है, अतः उसने यह मान लिया कि यह प्रतिमा शिव नहीं है।

निरीक्ष्य बाल्ये स मृतां स्वसारं तथा पितृव्यं दयितं गतासुम् ।
विनिर्गतः पितृगृहात्स इच्छन् सत्यं शिवं मृत्युमुखाच्च मुक्तिम् ॥ १०

बाल्यकाल में ही अपनी बहिन तथा चाचा को प्राण त्यागते देखकर वह सच्चे शिव को प्राप्त करने तथा मृत्युमुख से छूटकर मोक्ष प्राप्त करने के लिए अपने पिता के घर से निकल पड़ा।

विचिन्वता तेन गुरुं यथार्थं कष्टानि सोढानि महान्ति यानि ।
नदीनगा येऽत्र विलंघितास्तन्निदर्शकं तस्य मुमुक्षुतायाः ॥ ११

यथार्थ गुरु को ढूंढ़ने के लिये उसने महान् कष्टों को सहन किया। उसने जो विभिन्न नदियों और पर्वतों को पार किया, यही उसके मुमुक्षु होने का प्रमाण है।

बहूनि वर्षाणि परिभ्रमन् स देशस्य दारिद्र्यविमूढतायाः ।
चित्रं समग्रं परिगृह्य नूनं पुरीं स प्राप्नोत्मथुराभिधानीम् ॥ १२

बहुत वर्षों तक भ्रमण कर उसने देश की दरिद्रता तथा देशवासियों की मूढ़ता का समग्रचित्र अपने मानसपटल पर अंकित किया, पुनः वह मथुरा नगरी में आया।

वर्षत्रयं व्याकरणं सभाष्यं वेदांश्च सम्यक् परिशील्य तत्र ।
श्रीविरजानन्दयतीश्वरेभ्यो बभूव दिव्यार्षदृशा स युक्तः ॥ १३

तीन वर्ष तक भाष्यसहित व्याकरण तथा वेदों का सम्यक्तया अध्ययन कर उसने यति विरजानन्द से दिव्य आर्षदृष्टि प्राप्त की।

प्राप्ते तु काले गुरुदक्षिणायाः समर्पयामास लवंगकानि ।
अकिंचनत्वात्खलु केवलानि गुरोऽस्तु तस्यातितरां प्रियाणि ॥ १४

अध्ययनकाल समाप्त होने पर उसके गुरु को लौंग भेंटस्वरूप अर्पित की। स्वयं अकिंचनभिक्षु होने के कारण वह गुरु को अत्यन्तप्रिय यही भेंट दे सकता था।

गुरुस्तु तस्यातिविशालदृष्टिर्न कामयामास धनं न वित्तम् ।
स जीवनं केवलमाचकांक्ष सतप्तसंसारसुखस्य हेतोः ।।१५

उसके दूरदर्शी गुरु ने उससे न तो धन मांगा और न द्रव्य की ही याचना की, अपितु उसने संतप्त संसार के सुख के लिये उसका जीवन ही मांग लिया।

गुरोर्नियोगं शिरसा गृहीत्वा तपः प्रभावोग्रतरप्रभावः ।
अन्धंतमोऽधर्मपरं विभिन्दन् बभ्राम सर्वत्र यथोष्णरश्मिः ।।१६

गुरु की आज्ञा शिरोधार्य कर, अपने उग्र तप के प्रभाव से वह अधर्मरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य के तुल्य सर्वत्र भ्रमण करने लगा।

विजित्य शास्त्रार्थरणे विपक्ष्यान् प्रकाण्डपाण्डित्यधुरंधरान् सः ।
चकार तं दिग्विजयं महान्तं तुलैव नो यस्य पुराणकाले ।।१७

विपक्ष के धुरंधर पण्डितों को शास्त्रार्थसमर में जीतकर उसने महान् दिग्विजय की, जिसकी तुलना में प्राचीनकालीन कोई दिग्विजय नहीं ठहरती।

वेदान् स मेने चतुरः प्रमाणं जगद्धितार्थं जगदीशबोधम् ।
ग्रंथास्तु शेषान् परतः प्रमाणं मानुष्यकान् दोषयुतांस्तथैव ।।१८

संसार के हित के लिये, परमेश्वरोपदिष्ट चारों वेदों को ही उसने प्रामाणिक माना, अन्य ग्रन्थों को उसने परतः प्रमाण माना तथा मनुष्यकृत दोषों से युक्त देखा।

जीवेश्वरौ भिन्नसमौ बुबोध ऐक्यं तयोस्तस्य कदापि नेष्टम् ।
भिन्नां तथैव प्रकृतिं च ताभ्यां जुघोष नित्यं त्रितयं स एवम् ।।१९

वह जीव एवं ईश्वर को भिन्न मानता था, उनका ऐक्य उसे कदापि इष्ट नहीं था। उसी प्रकार वह ईश्वर तथा जीव से प्रकृति को भी भिन्न मानता था। इस प्रकार उसने त्रैतवाद की स्थापना की।

पूज्यं स एकेश्वरमेव जज्ञे यो विश्वसर्गस्थितिनाशहेतुः ।
अनाद्यनन्तो विभुरन्तरात्मा ह्यनन्तशक्तिश्च विशालरूपः ।।२०

उसने बताया कि एक ईश्वर ही पूज्य है जो संसार का रचयिता, पालक तथा संहारक है। वही अनादि, अनन्त, अन्तरात्मा, अनन्तशक्तियुक्त तथा विशालरूप है।

श्रुतेर्विरुद्धां खलु मूर्तिपूजां प्रत्यर्थिभूतां परमात्मभक्तेः ।
विनाशिनीं चैव नरात्मशक्तेस्त्याज्यां स मेने मनुजैः पृथिव्याम् ॥२१

मूर्तिपूजा वेदविरुद्ध होने से परमात्मा की भक्ति के विपरीत है । यह मनुष्य की शक्ति का विनाश करती है, अतः मनुष्यों द्वारा त्यज्य है, यह उसकी मान्यता थी।

स उज्ज्वलं वैदिकधर्मतत्त्वं प्रसार्य भूमौ कुशलं तनिष्यन् ।
संस्थां ससर्जार्यसमाजनाम्नीमेकादशोनं शतवर्षपूर्वम् ॥२२

उसने उज्ज्वल वैदिक धर्म का भूमि पर प्रसार कर कुशल क्षेम का प्रसार किया, नवासी वर्ष पूर्व आर्यसमाज की स्थापना की। (काव्य रचना के समय आर्यसमाज को स्थापित हुए उतने ही वर्ष हुए थे)

शाखास्तदीयाः शतशो विकीर्णाः संपादयन्त्यः शुभकार्यजातम् ।
न केवलं भारतवर्षदेशे कृत्स्नोऽपि सन्त्यत्र जगद्विभागे ॥२३

इस आर्यसमाज की सैंकड़ों शाखायें शुभकार्यों का सम्पादन करती हैं। न केवल भारतवर्ष में, अपितु संसार के अन्य भागों में भी ।

ग्रन्थं स सत्यार्थप्रकाशसंज्ञं भाष्यं तथैव श्रुतिसंहितानाम् ।
अपूर्वमाश्चर्यकरं प्रणिण्ये बहूनि चान्यानि हि पुस्तकानि ॥२४

उसने सत्यार्थप्रकाशसंज्ञक ग्रन्थ तथा वेदसंहिताओं का भाष्य अत्यन्त अपूर्व तथा आश्चर्यपूर्ण किया । अन्य भी बहुत से ग्रन्थ लिखे ।

पाखण्डरूपान्धतमःप्रसारं विखण्डयंश्चण्डगभस्तिभिः सः ।
अस्तं ययौ वैदिकधर्मभानुर्दीपोत्सवे ज्ञानशिखां प्रदीप्य ॥२५

पाखण्डरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए वह सूर्यतुल्य था। वह वैदिकधर्म का सूर्य ज्ञान की शिखा को प्रदीप्त कर दीपावली के दिन अस्ताचलगामी हुआ ।

— प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर

गुरुकुल पत्रिका नवम्बर-दिसम्बर १९६४

———

(३५) श्रीगुरुपादोदकम्

दयानन्दाम्बोधेः समुदितवतो ज्ञानलहरी
प्रविष्टा वेदात्मप्रमदविपिने सेचनपरा ।
प्रतिष्ठां संयाता विरजगुरुपादोदकरसैः
विकासं सम्प्राप्ताभिनवशिवसंकल्पचयनात् ॥१

दयानन्दरूपी समुद्र से उत्पन्न यह ज्ञानरूपी लहर वेदरूपी प्रमोद कानन को सींचती हुई इसमें प्रविष्ट होगई है । गुरुवर विरजानन्द के चरणोदक रस से इसे प्रतिमा प्राप्त हुई और यह अभिनव शिवसंकल्प से विकास को प्राप्त हुई है ।

स्मारं स्मारं गुणगणनिधिं ज्ञानविज्ञानमूर्तिं
ध्यायं ध्यायं शमदमपरं ध्वान्तपाखण्डभानुम् ।
पायं पायं गुरुवरदयानन्दपादोदकं यौ
श्रद्धाहंसौ परहितपरौ ज्ञानमार्गे कृतार्थौ ॥२

ज्ञान एवं विज्ञान की मूर्ति के गुणसमूह का स्मरण करते करते शम एवं दम युक्त तथा पाखण्डरूपी अन्धकार को नष्ट करनेवाले सूर्य का ध्यान करते हुए, गुरुवर दयानन्द के चरणोदक का पान करते करते श्रद्धारूपी हंस परहित तत्पर होकर ज्ञानमार्ग में कृतार्थ होगये हैं ।

सोऽयं महावैदिकधर्मगोप्ता
स्वातन्त्र्यराज्यस्य महाविभूतिः ।
विद्यावतारो गुरुदेववर्य-
श्चकार सत्यार्थमहाप्रदीपम् ॥३

उस महान् वैदिकधर्म के रक्षक, स्वतन्त्र राज्य की महान् विभूति, विद्या के अवतार, गुरुदेव दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाशरूपी महान् दीपक बनाया है ।

सुकुमारमतीञ्छिष्यान्प्रबोधमितुमञ्जसा ।
चकाराभिनवं शास्त्रं वेदभाष्यं दयानिधिः ॥४

उस दयानन्द ने सुकुमारबुद्धि शिष्यों के प्रबोध हेतु नूतन वेदभाष्यरूपी शास्त्र की रचना की ।

अहोभाग्यमहो भाग्यं गुरुकुलनिवासिनाम्।
यदनुग्रहेण सम्प्राप्तो गुरुशिष्यसमागमः ।।५

हे गुरुकुलनिवासियो, तुम्हारा अहोभाग्य है कि उस ऋषि की कृपा से तुम्हें गुरु-शिष्य समागम प्राप्त हुआ है।

दयानन्दांघ्रिपद्मस्य मधुपो मधुपः सदा।
शारदाचरणभक्तिं जगन्नाथो लभेत ताम् ।।६

दयानन्द के चरणरूपी कमल का रसपान करने में लुब्ध मधुप (भ्रमर) के तुल्य कवि जगन्नाथ सरस्वती के चरणों की भक्ति प्राप्त करे।

—पं० जगन्नाथ शास्त्री
अध्यापक—डी० ए० वी० हायर सैकण्डरी स्कूल
श्रीनगर (काश्मीर)
गुरुकुल पत्रिका—अक्तूबर-नवम्बर १९६४

—०—

(३६) भारतमहाद्वीपकः भूसुरो दयानन्दः दीपावलौ समुज्झितः

स्वाधीनताऽभ्यधिगमाय महानिनादम्
योऽसौ चकार परमं बुधसंवरेण्यः।
येनात्र वैदिकमतञ्च सनातनं वै
लोके भृशं प्रचरितञ्च समुद्धृतं च ।।१

जिस बुद्धिमानों में अग्रगण्य महापुरुष ने सर्वप्रथम स्वाधीनताप्राप्ति हेतु आवाज उठाई, जिसने सनातनवैदिकमत का उद्धार कर संसार में उसका सर्वत्र प्रचार किया।

पाखण्डदम्भछलछद्मयुता मनुष्याः
संप्रेरिता निगमवर्त्मवृताध्वनीनाः।

प्रध्वंसिता तु भुवने खलु मूर्तिपूजा
तर्केण येन निगमस्य परैः प्रमाणैः ।।२

जिसने पाखण्ड, छल और कपटयुक्त मनुष्यों को वेदप्रतिपादित मार्ग पर लगा दिया तथा जिसने वेदों के प्रमाण एवं तर्क के द्वारा मूर्तिपूजा को संसार से नष्ट कर दिया ।

लोकोपकारविषये विहितं हि भाष्यम्
वेदस्य येन विविधार्थमनोज्ञपूर्णम् ।
जातास्तु नास्तिकजनाः प्रभुवादिनो हि
यस्य प्रभावनिहितैः सततं वचोभिः ।।३

लोकोपकार के लिये जिसने विविध अर्थों से परिपूर्ण सुन्दर वेदभाष्य की रचना की, जिसके प्रभावपूर्ण वचनों से नास्तिक भी आस्तिक बन गये ।

संस्थापिता किल तथार्य्यसमाजसंस्था
वेदप्रचारशुचिबोधविभा यथा स्यात् ।
यस्मात्मनि प्रवहते च दयासमुद्रः
दीपावलौ दिवि गतः स दयाभिमूर्तिः ।।४

वेदप्रचार तथा पवित्र ज्ञान के प्रकाश के लिए जिसने आर्यसमाज की स्थापना की, जिसकी आत्मा से दया का समुद्र प्रवाहित होता था, वह दया की मूर्ति दीपावली के दिन दिवंगत हो गई ।

दत्वा त्वहो स मनुजेभ्य इतः प्रयातः
दीपावलौ श्रुतिमयो विमलः प्रदीपः ।
वर्णी यमी च नियमी विबुधः स योगी
दीपावलौ दिवि गतः स विहाय विश्वम् ।।५

मनुष्यों को विमल वेदरूपी दीपक प्रदान कर वह संन्यासी, देवता, योगी दयानन्द संसार को त्यागकर दीपावली के दिन दिवंगत हो गया ।

दीपावले तव किलाऽऽगमनं निरर्थम्
यस्त्वं प्रदीय खलु क्षुद्रमनन्तदीपम् ।
मेऽपाहरस्त्वतुलितं ननु दिव्यदीपम्
दुर्हृत्तथा च कपटी प्रतिभासि मे त्वम् ।।६

हे दीपावली, तुम्हारा आगमन व्यर्थ ही है, जो तुम क्षुद्र, संख्यातीत दीपकों

को जलाती हो। तुमने मेरे उस दिव्य दीपक दयानन्द का तो अपहरण ही कर लिया है, अतः तुम मुझे दुष्टहृदया तथा कपटी प्रतीत होती हो।

साधँ मया कृतछलोऽसि कथं त्वमित्थम्
यावन्न दास्यसि त्वनन्तसुकाशयुक्तम् ॥
मे दीपकं ह्यमरदीप्तियुक्तं च तावत्
अभिनन्दयामि न च त्वां न च ते हि दीपान् ॥७

तूने मेरे साथ छल किया है जो तू अनन्त प्रकाशयुक्त दीपक प्रदान नहीं कर रही है। मेरे दीप्तियुक्त दीपक को न देने के कारण मैं न तो तुम्हारा और न तुम्हारे इन क्षुद्रदीपों का ही अभिनन्दन करूंगा।

नीत्वा त्वितश्च त्वमपेहि सहस्रदीपान्
स्वं दर्शयाथ न च कृष्णमुखन्त्वमेतत्।
याचे प्रभो! न खलु लक्षमिमान् हि दीपान्
मे त्वेक एव विमलं हि प्रदेहि ज्योतिः ॥८

हे दीपावली, अपने सहस्रों दीपों को लेकर तू चली जा। मुझे अपना कृष्णमुख मत दिखा। हे प्रभो, मैं इन लाखों क्षुद्र दीपकों की तुमसे याचना नहीं करता। मुझे तो तुम विमल ज्योतिवाला दयानन्द सा दीपक प्रदान करो।

योऽभूद्वेदव्रती महामतियुतो यः कामजित्क्रोधजित्।
यो नित्येश्वरभक्तिमान् जनहिती यश्चोपकारी स्मृतः
वन्दे तं हि यशस्विनं मुनिवरं देवं दयानन्दकम् ॥९

जो वेदों से उत्पन्न वैदिक धर्म का उद्धारक था, जो संयमी, काम तथा क्रोध पर विजय प्राप्त करनेवाला, महाबुद्धिमान्, वेद के व्रत का धारण करनेवाला, नित्य ईश्वर का भक्त, जनता का हितकारक तथा उपकारी था, उस यशस्वी देव दयानन्द मुनिवर की मैं वंदना करता हूं।

—डा० प्रशस्यमित्र शास्त्री
गुरुकुल पत्रिका अक्तूबर नवम्बर १९६४

———

(३७) सत्यवक्ता महर्षिदयानन्दः

अवदत्समये ऋषिमिन्द्रमणिः परिगम्य शुचिं गुरुयोगिपदम् ।
इह खण्डनमण्डनबंधनके रमसे तु मुधैव कथं हि भवान् ॥१

ऋषि से कहा इन्द्रमणि ने
होकर योगी अवधूत बड़े ।
खण्डन मण्डन के झंझट में
हैं महाराज क्यों व्यर्थ पड़े ?

विफलं खलु खण्डनमण्डनकम् कथितं ऋषिणा तु तवोक्तिरियम् ।
जनता सुहिताय परन्तु मया बहुमंगलमिदं हि मतम् ॥२

ऋषिवर बोले खण्डन मण्डन
ये तुमने झंझट माना है ।
पर मैंने तो जनता के हित
अति ही श्रेयस्कर जाना है ।

सदसत्सुविवेकमनन्तजनं करणीयमनेन सदैव मया ।
इह मुन्यृणमस्त्यपनीयमहो जगति ध्रुवमेव तथैव मया ॥३

इसके द्वारा जन जन को
सत्यासत्य विवेक कराना है ।
इसके ही द्वारा ऋषियों का
ऋण मुझे अवश्य चुकाना है ।

ऋषि सन्ततिरत्र निमज्जति वै बहुविघ्नवृता हि कुरीतिव्युदधौ ।
सुविकासच्युता परितश्च सतः निपतत्यसतस्तमसि परितः ॥४

ऋषियों की सन्तति बुरी भाँति
है कुरीतियों में फंसी हुई ।
सत् के प्रकाश से दूर असत्
अघ अन्धकार में धंसी हुई ॥

अवलोक्य तासामतिहीनदशाम् मन एति सदा मम व्याकुलताम् ।
बहु रोदिमि चैव तदा भुवनम् प्रमदेन करोति यदा शयनम् ।।५

लख के इनकी यह हीन दशा
अत्यन्त विकल मन होता है ।

मैं अश्रु बहाता हूं सारा जग
जब निन्द्रा में सोता है ।।

कथमत्र प्रदर्श्य न सत्सरणिम्
हृदि शान्तिसुधां हि भरेयमहम् ।

खलस्वार्थिप्रपञ्च्यसताभय:
कुघटं न कथं घटयेयमहम् ।।६

मैं सत्पथ दिखा क्यों न इनके,
जीवन में शान्ति सुधा घोलूं ।

खल स्वार्थी प्रपञ्चियों की मैं
निर्भय हो क्यों न पोल खोलूं ?

वदनाक्षिश्रवे तु धृतेऽपि कथं विमुखाक्षिश्रवो हि भवेयमहम् ।
हृदि मे बहुयत्नकृते च श्रुतेः श्रुतिज्ञानरुभं हि कृतं गुरुणा ।
पुनरिन्द्रमणे तु कथनं तदा न हि सत्यवचांसि वदेयमहम् ।।७

दृग्, कर्ण, जीभ होते कैसे
मैं अन्धा बधिर मूक होलूं ।

गुरु ने मुझको सत् ज्ञान दिया
फिर क्यों न वचन सत्य बोलूं ।।

पं० प्रशस्यमित्र शास्त्री
पद्यानुवादक— स्व० प्रकाशचन्द्र कविरत्न

—•—

(३८) नयनपथगामी भवतु नः

सुगीता येन स्यादिह जगति वै वेदमहिमा ।
तथा मूर्तेर्पूजा घटयति प्रमाणे न निगमात् ।।
सदा वेदात्सिद्धौ प्रकटयति चेद्वैदिकमतम् ।
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु नः ।१

जिन्होंने संसार में वेद की महिमा का गान किया तथा सिद्ध किया कि वेदों के प्रमाण से मूर्तिपूजा सिद्ध नहीं होती। जिन्होंने वेदों से सिद्ध वैदिक धर्म को सदा प्रकट किया, ऐसे स्वामी दयानन्द हमारे नेत्रपथगामी हों।

सुसंलग्नौ नित्यं दलितपतितानामतिहिते ।
सुभक्तो राष्ट्रस्यामृतमयदयारूपहृदयः ।।
सुविद्यस्तेजस्वी यमनियमचारी मुनिवरः ।
दयानन्दः स्वामी नयनपथगामी भवतु नः ।।२

जो दलित तथा पतित लोगों के हितसाधन में सदा लगा रहा, जो राष्ट्र का भक्त था तथा जिसके दयापूर्ण हृदय में अमृत का निवास था, जो विद्यावान्, तेजस्वी तथा यमनियमों का पालन करनेवाला मुनिवर था, ऐसे दयानन्द स्वामी हमारे नेत्रपथगामी हों।

—प्रशस्यमित्र शास्त्री
परोपकारी जनवरी १९६४ ई०

——

(३९) दयानन्दः स्वामी जयति भुवने भास्कररुचिः

गुणानामाधारो विदितश्रुतिशास्त्रार्थनिचयः ।
समुद्धर्ता भर्त्ता पतितजनचित्तार्तिहरणः ।।
श्रयन्नात्मोत्सर्गं परहितरतः स्वार्थविरतो,
दयानन्दः स्वामी जयति भुवने भास्कररुचिः ।।१

जो गुणों के आधार हैं तथा वेदों एवं शास्त्रों के अर्थों के ज्ञाता हैं। जो पतितजनों के चित्त की पीड़ाओं को दूर करनेवाले, उनका उद्धार करनेवाले तथा भरणपोषण करनेवाले हैं। जो नितान्त स्वार्थभाव से शून्य, परहित में लग्न तथा आत्मोत्सर्ग में लीन हैं। ऐसे स्वामी दयानन्द संसार में सूर्य की भांति प्रकाशित हों।

'दयाया आनन्दो' विलसति गुणानां समुदयः।
ऋषिर्वेदार्थानां गहनमननावाप्तशुभधीः॥
श्रुतीनां राद्धान्तान् विशदयति वेदार्थविवृतौ।
सरस्वत्याः स्रोतो जयति यतिवर्यो गुणनिधिः॥२

जिसमें दया और आनन्द जैसे गुणों का समूह प्रकाशित हुआ। जो गहन मनन के द्वारा वेद के तत्त्वार्थ को जानता था, जो आप्त तथा शुभबुद्धिसम्पन्न था, वेदार्थ का विस्तार कर जिसने वेदों के सिद्धान्तों को विशद किया, ऐसे सरस्वती (ज्ञान) के स्रोत, गुणों के भण्डार यतिवर दयानन्द की जय हो।

अनाथानां नाथः शरणमबलानां गुणिगुरुः
विनेता भीतानां सुपथमुपनेता च सुधियाम्॥
शरण्यो दीनानां गुणगणवरेण्यः श्रुतिमतिः
दयानन्दो योगी जयति भुवने भास्कररुचिः॥३

जो अनाथों के नाथ थे, निर्बलों के शरण थे, गुणिजनों में वरिष्ठ थे, भयभीत दीनजनों को मार्गदर्शन देनेवाले तथा बुद्धिमान् लोगों को सन्मार्ग की ओर ले जानेवाले थे, जो दीनों के शरणस्थल थे, श्रेष्ठ गुणों को धारण करनेवाले तथा वेदों में स्थिरमति थे, ऐसे योगी दयानन्द संसार में सूर्य के तुल्य प्रकाशमान हों।

प्रणेता भाष्याणां श्रुतिगदिततत्त्वार्थनिलयो।
यति सत्यार्थं यः प्रकटयति सत्यार्थसुकृतौ॥
श्रुतीनां तत्त्वार्थं विशदयति ऋग्भाष्यविवृतौ।
दयानन्दो वाग्मी जयति भुवने भास्कररुचिः॥४

श्रुतिप्रतिपादित तत्त्वार्थ के भण्डार वेदभाष्यों का जिसने प्रणयन किया, जिसने सत्यार्थप्रकाश की रचना कर सत्यार्थ का प्रकाशन किया, जिसने ऋग्वेद पर भाष्य लिखकर वेदों के वास्तविक अर्थों का विस्तार किया, ऐसे वाग्मी दयानन्द संसार में सूर्य की भांति प्रकाशित हैं।

ऋषीणां प्रत्नां यः सरणिमनुसृत्याशु विदधे ।
श्रुतीनां शिक्षार्थं गुरुकुलततिं ज्ञानरुचिराम् ॥
विरुद्धं वेदानां तदिदमिह हेयं सुपथगै-
र्दयानन्दो दान्तो जयति भुवने भास्कररुचिः ॥५

जिन्होंने प्राचीन ऋषियों की परिपाटी का अनुसरण करने का उपदेश दिया, वेदों की शिक्षा के लिए जिन्होंने गुरुकुलों का विस्तार करने के लिये कहा, जिनका कथन था कि सुपथगामियों के लिए वेद से विरुद्ध जाना उचित नहीं है, ऐसे दानी दयानन्द संसार में सूर्य के तुल्य प्रकाशमान् हैं ।

समुद्धर्ता भर्ता सकलगुणराशिर्बुधसुहृद् ।
नदीष्णो वेदानां जनहितकृतस्वार्थविरहः ।
अविद्याया ध्वान्तं व्यगमयदिहाध्यात्मसुदृशा
मुनीन्द्रो व्यारेजे सकलसुखसौभाग्यसरणिः ॥६

जो सबके उद्धारकर्ता तथा भर्ता हैं, सकलगुणों से युक्त तथा बुद्धिमानों के मित्र हैं, जो वेदों में कुशल हैं तथा स्वार्थरहित होकर लोकहितार्थ समर्पित हैं, जिन्होंने अध्यात्म की शोभनीय दृष्टि से अविद्या के अन्धकार को नष्ट किया है, ऐसे सकल सुख एवं सौभाग्य को प्रवर्तित करनेवाले मुनीन्द्र दयानन्द सुशोभित हो रहे हैं ।

समाजं त्वार्याणां प्रतिनगरमस्थापयदिह ।
समुन्मूल्याऽऽमूलं श्रुतिविपथपाखण्डनिचयम् ॥
सदादर्शं प्राच्यं भुवि विनिदधे शान्तिसुखदं
दयानन्दो धीरो जयति भुवने भास्कररुचिः ॥७

जिन्होंने प्रत्येक नगर में आर्यों के समाज की स्थापना की, वेदविरुद्ध पाखण्डसमूह को समूल उन्मूलित किया, शान्ति और सुख देनेवाले प्राच्य आदर्शों की धरती पर स्थापना की, ऐसे सूर्य के तुल्य आभायुक्त धैर्यवान् दयानन्द की जय हो ।

गवां रक्षा कार्या पदमनुविधेयं च सुधियां
गुणा ग्राह्या हेयाः सततमशिवा दोषनिकराः ।
सदाऽऽर्याणां भाषा प्रचरतु भवे भव्यगुणधा,
य एवं व्याचख्यौ जयति यतिर्भास्करनिभः ॥८

जिन्होंने गोरक्षा का उपदेश दिया तथा बुद्धिमानों के चरणचिह्नों पर

चलने का विधान किया, जिन्होंने गुणों के धारण करने तथा अकल्याणकारी दोषसमूहों को त्याग पर जोर दिया, जिन्होंने सदा भव्यगुणोंवाली आर्यभाषा (हिन्दी) के प्रचार की बात कही, ऐसे सूर्य के तुल्य प्रकाशमान् यति दयानन्द की विजय हो ।

जनें ह्यस्पृश्यत्वं न हि श्रुतिमतं नापि हितकृद् ।
विजातेर्जातिश्च बहुविधविभागो न हि हितः ।
विदेशीयं राज्यं न हि मतिमतां मानगुणदम् ।
मनोज्ञं स्वातन्त्र्यं निजबलिकृतेनापि सुखदम् ।।९

जिनका कथन था कि लोगों में अस्पृश्यता का भाव न तो वेदसम्मत है और न हितकारक ही है, जातियों का बहुविध विभाजन भी श्रेयस्कर नहीं है, बुद्धिमानों द्वारा संचालित विदेशी राज्य भी मान एवं गुणप्रदान करनेवाला नहीं होता, अपितु स्वयं की बलि देकर प्राप्त किया गया स्वराज्य सुखद तथा सुन्दर होता है ।

सुशिक्षा नारीणां विपथजनशुद्धिं प्रचलयन् ।
पदाक्रान्तत्राणं विदधदनिशं जीवनपणैः ।
'समं लोकं चार्यं कुरुत' इति लोकानुपदिशन् ।
दिवं यातो जीवत्यमर इव वंद्यो यतिवरः ।।१०

जिन्होंने स्त्री-शिक्षा का प्रचलन किया तथा विपथगामी लोगों को पुनः शुद्ध करने के लिए कहा, अपने जीवन को लगाकर भी जिन्होंने पादाक्रान्त लोगों की रक्षा करने का उपदेश दिया, साथ ही जिन्होंने लोगों को अपने ही तुल्य अन्यों के प्रति आचरण करने के लिए कहा, ऐसे यतिवर दयानन्द दिवंगत होने पर भी जीवित हैं तथा अमर के तुल्य वंदनीय हैं ।

—डा० कपिलदेव द्विवेदी
कुलपति, गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर

— —

(४०) महर्षिदयानन्दसरस्वती

धृतव्रतो महाप्राणो महात्मा धर्मधूर्वहः ।
पुरोधा युगधर्मस्य ज्योतिःस्तम्भः स तमोयुगे ॥१॥

संस्कृतेः प्रतिसंस्कर्ताऽप्यतनार्याग्रणीर्महान् ।
आर्यत्वोद्धारपद्धत्या आद्यद्रष्टा कलौ युगे ॥२

उच्छ्रयिता पताकां चान्वर्थां पाखण्डखण्डिनीम् ।
दयानन्दो मुनिर्वन्द्यो भारतीयैर्युगे युगे ॥३

हुतात्मानौ दयानन्द-श्रद्धानन्दौ तु विस्मृतौ ।
श्रद्धिता राष्ट्रभङ्क्तारो धिग् धिग् श्रद्धाविपर्ययः ॥४

डा० हर्षनारायणः

जो व्रतों को धारण करनेवाला, महाप्राण, महात्मा तथा धर्म की धुरी को धारण करनेवाला था, जो युगधर्म का पुरोधा तथा अन्धकार के युग में ज्योति-स्तम्भ के तुल्य था, जो सुसंस्कृतों को पुनः संस्कृत करनेवाला तथा आर्यों का महान् अग्रणीनेता था, वही कलियुग में आर्यत्व का उद्धार करनेवाली प्रणाली का आदिद्रष्टा था ।

जो पाखण्डखण्डनी पताका को फहरानेवाला था, वह दयानन्द मुनि युग-युग में भारतवासियों द्वारा वंदनीय है । जिन्होंने दयानन्द और श्रद्धानन्द जैसे हुतात्माओं को विस्मृत कर दिया तथा राष्ट्र को तोड़नेवालों के प्रति श्रद्धा प्रकट की, ऐसे लोगों के श्रद्धा विपर्यय को भूयोभूयः धिक्कार है ।

———

(४१) महर्षिस्तवम्

प्रचण्डं पाखण्डं दलितदुरितोऽखण्डयदलम् ।
अखण्डं भूखण्डं विमलयशसाऽमण्डयदयम् ॥
अनाथानां नाथः पतितमनुजोन्नीति-निपुणो-
दयानन्दः स्वामी निगमपथगामी विजयते ॥

जिसने प्रचण्ड पाखण्ड तथा पापों को नष्ट किया, जिसने अपने विमल यश से सम्पूर्ण भूमण्डल को सुशोभित किया, जो अनाथ एवं पतित मनुष्यों का रक्षक-स्वामी था, ऐसे नीतिनिपुण, वेदमार्ग पर चलनेवाले स्वामी दयानन्द की विजय हो।

श्रुतीनां उद्धर्ता युगनवलजागर्तिमविता।
घनाज्ञानध्वान्तापनयनपटुर्ज्ञानसविता॥
समाजोद्धारायार्पितनिजवपुर्बुद्धिविभवो-
दयानन्दो योगी त्रिदिवसुखभोगी विजयते॥

जो वेदों का उद्धारकर्ता तथा नवयुग की जागृति का प्रवर्त्तक था, अज्ञान के घने अन्धकार को दूर करनेवाला जो ज्ञान का सूर्य था, जिसने अपने शरीर तथा बुद्धिवैभव को समाज के उद्धारार्थ समर्पित कर दिया था, ऐसे योगी दयानन्द, जो मोक्ष के सुख को प्राप्त कर सके, उनकी विजय हो।

—आचार्य विशुद्धानन्द मिश्र

o——o

(४२) ऋषिस्तवनम्

ऋषिदयानन्ददयालुस्मरमनहरणतिमिरदिवाकरम्।
विद्याविभूषणपापमर्षणशीलसद्गुण-आकरम्॥
सुविशालबाहुमनोज्ञभालविशालकान्तकलेवरम्।
वेदानुकूलमथितसनातनधर्म-उद्धारकं वरम्॥
खलदलविजेता विश्वनेता ऊर्ध्वरेता सुन्दरम्।
आनन्द-करुणाकन्द-विरजानन्द-गुरुवर-अनुचरम्॥
प्रतिभा-अभयता विद्वत्ताप्रभुभक्तिशवितनिदर्शनम्।
जगवन्दनीय-अनिन्द्यसुन्दरचरित-उज्ज्वलशोभनम्॥
अपहरणकर्ता दुरितसंसृतिजन्यसंशयभ्रान्तिभ्रमः।
ऋषिराज आर्यसमाज निर्माता विधाता दिव्यतम्॥

युगयुगप्रताडितदलितशोषितदुखितजनितासंबलम् ।
पाखण्डजड़ता स्वार्थपरता रूढिहर्ता पुष्कलम् ।।
सत्यार्थदर्शक पथप्रदर्शक युगप्रवर्त्तक दुर्धरम् ।
संसृतिनियामक पृष्ठपोषक क्रान्तदर्शी कविवरम् ।।
गुणग्राम विद्याधाम वर्चस्वी मनस्वी शिवकरम् ।
कुरु स्मरण रामनिवास ऋषि उपकारसार मनोहरम् ।।

भावार्थ

हे मन, तू उन ऋषि दयानन्द का स्मरण कर जो दयालु तथा अज्ञानरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिये सूर्य के तुल्य हैं। जो विद्या से विभूषित, पापों को दूर करनेवाले, शील तथा सद्गुणों के भण्डार हैं। जिनकी भुजाएं विशाल और सुन्दर हैं, जिनका विशाल भाल तथा सुन्दर शरीर है। जो वेदानुकूल श्रेष्ठ सनातन धर्म के उद्धारक हैं। वे ही स्वामी दयानन्द दुष्टों के समूह पर विजय प्राप्त करनेवाले, विश्व के नेता तथा ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी हैं। ऐसे आनन्द और करुणा के भण्डार स्वामी दयानन्द गुरुवर विरजानन्द के अनुगामी हैं। इनमें प्रतिभा, अभय, विद्वत्ता, प्रभुभक्ति आदि गुणों का निदर्शन हुआ है। ये संसार से वन्दनीय, अनिंद्य सुन्दर तथा उज्ज्वल चरित्र से सुशोभित हैं। समस्त दुरितों तथा संसार में उत्पन्न होनेवाले भ्रमों एवं संशयों को दूर करनेवाले हैं। ये ऋषिराज आर्यसमाज के संस्थापक दिव्यविधाता हैं। युग-युगान्तरों से प्रताड़ित शोषित, दलित तथा नारीवर्ग के सम्बलरूप हैं। अत्यधिक पाखण्ड, जड़ता, स्वार्थपरता तथा रूढ़ियों को नष्ट करनेवाले हैं। सत्यार्थ दिखानेवाले, सही मार्ग बतानेवाले अप्रमेय युगप्रवर्त्तक हैं। सृष्टि नियमों के पालनकर्ता तथा उसकी पुष्टि करनेवाले ये क्रान्तदर्शी कवि हैं। गुणों तथा विद्या के धाम, वर्चस्वी, मनस्वी तथा कल्याण करनेवाले हैं। रामनिवास कहते हैं कि ऋषि के सुन्दर उपकारों का हमें सदा स्मरण करना चाहिए।

रामनिवास विद्यार्थी
सुन्दरनगर फजलपुर (मेरठ)

०——०

(४३) दयानन्दो दयानिधिः

धरातुल्यं क्षमाशीलं सुधांशुवन्मनोहरम् ।
समुद्रतुल्यगम्भीरं हिमाद्रिवत्तु निश्चलम् ॥
गंगासलिलसंकाशं पावनं यस्य जीवनम् ।
आर्त्तानां सान्त्वनं सैष दयानन्दो दयानिधिः ॥

जो पृथ्वी के तुल्य क्षमाशील तथा चन्द्रमा के तुल्य मनोहर थे, जो समुद्र के तुल्य गम्भीर तथा हिमालय की भांति निश्चल थे, जिनका जीवन गंगाजल की भांति पवित्र था तथा जो दुःखियों को सान्त्वना देनेवाले थे वे ही दया के भण्डार स्वामी दयानन्द हैं ।

आर्याणां समाजं यः रूढिवादविनाशिनम् ।
समास्थापितवानत्र दयानन्दो दयानिधिः ॥
चतुर्दशान् हि वारांश्च विषपानं तु कारितः ।
घातकाय धनं दाता दयानन्दो दयानिधिः ॥

उस दयानिधि दयानन्द ने रूढ़िवाद का विनाश करनेवाले आर्यसमाज की स्थापना की, उन्होंने अपने जीवन में चौदह बार विषपान किया और अन्त में अपने घातक को धन देकर विदा कर दिया वे दयाधन दयानन्द ही हैं ।

—सुरेन्द्रकुमार शास्त्री

०——०

(४४) वन्दे दयानन्दमहामुनीन्द्रम्

श्रेष्ठा नरा ये वरणीयश्रेण्याम्
जाताः समाजे सकलैः सुपूज्याः ।
तेभ्योऽपि मान्यं विदुषं द्विजेन्द्रं
वन्दे दयानन्दमहामुनीन्द्रम् ॥ १

वे श्रेष्ठ पुरुष जो वरणीय श्रेणी में हैं तथा जो समाज में सब के पूजनीय हैं,

उनमें सर्वोपरि मान्य, विद्वान्, द्विजश्रेष्ठ, महामुनीन्द्र दयानन्द की मैं वन्दना करता हूं।

केचित्तु कायाभरणैः सुरत्नैः
केचिच्च भोगेषु समोदलग्नाः।
केचिच्च विज्ञाः पठनेषु रक्ताः
प्रीतिं परित्यज्य शरीरपुष्टेः॥ २

कई लोग सुन्दर रत्नों द्वारा अपने शरीर को विभूषित करते हैं, कई आमोदपूर्वक भोगों में संलग्न हैं और कई बुद्धिमान् अपने शरीर की पुष्टि की प्रीति छोड़कर पठन कार्य में लगे रहते हैं

केचित्तु स्वार्थे निरता दिवान्धाः
केचिच्च पुष्टौ धनपुत्रपत्नैः।
केचिद्विरुद्धाः परमात्मशक्त्याः
जातानुपूर्व्याः कृतकार्यभोग्यैः। ३

कई दिवान्ध के तुल्य स्वार्थपूर्ति में संलग्न हैं। कई धन, पुत्र और पत्नी में आसक्त हैं। कई लोग परमात्मा की शक्ति के विरोधी हैं तथा कई अन्य अपने पूर्वकृत कर्मों का भोग भोगते हैं।

तं कामभोगेषु विरक्तचित्तम्।
योगेन्द्रदेवं समशक्तिविद्यम्।
संसारकल्याणहितेषु लग्नम्
वन्दे दयानन्दमहामुनीन्द्रम्॥ ३

वह दयानन्द काम और भोगों के प्रति विरक्तचित्त था, दयानन्द योगीन्द्रों के तुल्यशक्तिवाला था, संसार के कल्याण में संलग्न उस महामुनि दयानन्द की मैं वन्दना करता हूं।

कौपीनवन्तं खलु भाग्यवन्तं
दिव्यं वर्णीन्द्रं भुवनेशभक्तम्।
वेदस्य भाष्यस्य सुकर्तृकं तं
वन्दे दयानन्दमहामुनीन्द्रम्॥ ३

कौपीन धारण करनेवाले ब्रह्मचारी ही भाग्यवान् होते हैं। ऐसे ही दिव्य-संन्यासी भगवान् के भक्त होते हैं। वेद के सुन्दर भाष्यकर्ता उन महामुनि

दयानन्द की मैं वन्दना करता हूं ।

ब्रह्मचारी योगेन्द्र आर्य दर्शनाचार्य गुरुकुल झज्जर
गुरुकुल पत्रिका फाल्गुन २०२१ वि० में प्रकाशित

०——०

(४५) महर्षिः दयानन्दः सरस्वती

दयानन्दो महानन्दः स्वामी धर्मप्रचारकः ।
वैदिको वेदधर्मात्मा आर्यधर्मप्रयोजकः ॥

महान् आनन्द प्रदान करनेवाले, धर्मप्रचारक महर्षि दयानन्द आर्यधर्म के प्रयोजक, वैदिक धर्म की आत्मा तुल्य वैदिक हैं ।

शिवरात्रिरभूत्तस्य बोधरात्रिर्महात्मनः ।
वेदोऽखिलस्य धर्मस्य मूलमिति जुघोष सः ॥

उस महात्मा के लिये शिवरात्रि बोधरात्रि के तुल्य सिद्ध हुई । उसने यह घोषणा की कि अखिल धर्म का मूल वेद ही है ।

अन्तेवासी विनीतो विरजानन्दस्य दण्डिनः ।
आर्षविद्यासमुद्धर्ता युगबोधप्रदायकः ॥

यह विनीत दयानन्द दण्डी विरजानन्द के शिष्य थे । वे युग को बोध देनेवाले तथा आर्षविद्याओं के उद्धारकर्ता थे ।

नमो वै ऋषिभूताय सत्यार्थदर्शकाय च ।
आर्यसमाजसंस्थायाः संस्थापकाय वै नमः ॥

उन ऋषितुल्य, सत्यार्थप्रदर्शक तथा आर्यसमाज के संस्थापक को हमारा नमस्कार है ।

—डा० नरदेव शास्त्री
प्राध्यापकः संस्कृत विभाग,
हिमाचल विश्वविद्यालय शिमला

०——०

(४६) दयानन्द-स्तुतिः

नमामि मूलशंकरं दयाकरं गुणाकरम् ।
प्रभाकरं सुधाकरं समस्तलोकभास्करम् ।
स्वज्ञानदीपिभास्वरं गुणप्रभाविकस्वरम् ।
स्वयोगरोचिषावृतम् तपोविधूतकल्मषम् ।
महर्षिवृन्दवन्दितम् श्रुतेर्निनादनन्दितम् ।
अनाथनाथमाश्रयम् सदा सदार्तसंश्रयम् ।
भजे गुणैकमानिनं श्रुतिप्रमैकध्यायिनम् ।
भवाब्धिदोषपायिनं सुखोघशान्तिदायिनम् ।
तमोऽपहं रजोऽपहमजस्रमात्मदोषहम् ।
तपःप्रपूतमानसं अनार्यवृन्दशासनम् ।
श्रये गुणोच्चयाश्रयं मनोज्ञभावसंश्रयम् ।
भवाब्धिदुःखतारकम् अशेषदोषहारकम् ।
श्रुतिस्मृतिप्रचारकं सदार्यवर्त्मधारकम् ।
दरिद्रदैन्यदारकम् गुणप्रभाप्रसारकम् ।
गुणाञ्चितं प्रभाञ्चितं समस्तगौरवाञ्चितम् ।
परार्थत्यक्तसंग्रहं त्विषा प्रदीप्तविग्रहम् ।
नमामि लोकलोचनं स्फुरत्प्रभाप्ररोचनम् ।
सुधीप्रवीररञ्जकं समस्तदोषभंजकम् ।

नमामि मूलशंकरं..................

सत्यार्थप्रकाश शताब्दी समारोह पानीपत
स्मारिका (१९७९ ई०) से उद्धृत

०——०

(४७) दयानन्दः स्वामी जयति भुवने भास्करमणिः

महोदारो विद्वान् श्रुतिमहित्रसाहित्यसुहितः
महोमान्यो धन्यो निखिलदिशि पुण्यस्मृतिपथि ।
महत्त्वं वेदान्तं प्रकटितसमेषामपि पुनः
यथा दिव्यः सूर्यः शशिनमनुभात्यन्तसुचिरः ।। १

जो महान् उदार तथा वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् थे, जो महामान्य, धन्य तथा समस्त दिशाओं में पुण्यशील व्यक्ति के रूप में स्मरण किये जाते थे, उन्होंने वेद के चरमज्ञान के महत्त्व को सब लोकों पर उसी प्रकार प्रकाशित किया जिस प्रकार सूर्य चन्द्रमा को प्रकाशित करता है ।

अयं पुण्याकाशो विविधमतमान्यस्त्रिभुवने
अयं पुण्यादर्शो निखिलगुणगण्येषु विदितः ।
अयं पुण्यश्लोकोऽखिलपदनिकुञ्जेऽपि गणितः
अयं पुण्यानन्दो विदितनिगमानन्दसहितः ।। २

ये दयानन्द उस पुण्याकाश के तुल्य हैं जिसे समस्त लोकों के निवासी आदर देते हैं, ये स्वामी समस्त श्रेष्ठ गुणों के पुण्यमय आदर्श हैं । समस्त पद-वाङ्मय की गणना करने पर ये ही पुण्यश्लोक दिखाई पड़ते हैं । वेदों के द्वारा प्राप्त आनन्द से युक्त होने के कारण इनका आनन्द भी पुण्यमय ही है ।

दयायुक्तो धन्यो क्षितितलवदान्यो खलु महान्
प्रकर्षो पुण्यात्मा सकलकुलकार्येषु महितः ।
सदाऽऽनन्दो यस्मिन् विलसति सदा पुण्यहृदये
दयानन्दो वन्द्यो न खलु महसां पुण्यसमये ।। ३

ये दयायुक्त दयानन्द धन्य हैं । पृथ्वीतल पर ये ही महान् उदार पुरुष हैं । ये उत्कृष्ट पुण्यात्मा हैं । इनके पवित्र हृदय में सदा आनन्द ही निवास करता है । उत्सवों के पवित्र अवसर पर दयानन्द निश्चय ही हम सबके वन्दनीय हैं ।

अयं लोकाऽऽलोकः सुरनरमहेन्द्रेष्वपिहितः
विवेको बुद्धीनां विपदपदप्राप्तेरभयवान् ।

स्वधर्मभ्रष्टानां सुविदितबुधानामपि तथा
समुद्धर्ता योऽसौ सकलजगतामल्पसमये ।। ४

देवता, मनुष्य और राजाओं से परिपूर्ण इस संसार को ये प्रकाशित करते हैं। बुद्धिमानों के ये विवेकतुल्य हैं। समस्त संसार में इन्होंने स्वधर्म से भ्रष्ट तथा बुद्धिमान् लोगों का भी स्वल्प समय में ही उद्धार किया है और यह बात सब लोगों को भलीभांति विदित है।

प्रभातो वेदानां धवलितदिगन्तो दिनकरः
अयं धन्यो शिष्यो जयति विरजानन्दयतिनः ।
प्रसिद्धाः शिष्याश्च सकलभुवने यान्ति रुचिराः
दयानन्दः स्वामी जयति भुवने भास्करमणिः ।। ५

वेदों को प्रकाशित करनेवाले ये प्रभात के तुल्य हैं। दिगन्त को प्रकाशित करनेवाले सूर्य हैं। ये विरजानन्द स्वामी के शिष्य धन्य हैं। इनके सुशिष्य समस्त लोक में प्रसिद्ध हैं। ऐसे स्वामी दयानन्द संसार में सूर्य के तुल्य प्रकाशित होते हुए विजय को प्राप्त हों।

पं० केशवप्रसाद उपाध्याय

---

(४८) युगप्रवर्त्तकस्य महर्षेः श्रीमतो दयानन्दस्य सरस्वतीमहाराजस्य महिम्नः स्तोत्रम्

(विबुधप्रियानाम्नि वृत्ते)

किं त्वमाप्स्यसि भूतले सकलेऽपि जन्मि-परीक्षणे,
प्राकृतं जनमप्यहो कुरुते जनोत्तममाशु यः ।
सत्यधर्म-पुरस्कृतं च दधाति कर्म परात्मने,
सोऽभवद् भुवि भारतस्य महर्षिरेव दयोदधिः ।। १

अहो मित्र ! सारे संसार में मनुष्यों की परीक्षा करने पर भी क्या तू कोई ऐसा मनुष्य पासकेगा ? जो निपट मनुष्य को शीघ्र से शीघ्र मनुष्यों में श्रेष्ठ

मनुष्य बनाता हो और जो दूसरे के लिए धर्म को आगे रखकर कार्य करता हो। मित्र ! हो सकता है कि तू न भी पा सके, किन्तु मैं बताता हूं कि इस भारत की भूमि पर दया के सागर वे महर्षि दयानन्द ही थे।

जाति-वर्ग-विशेष-देश-विभाग-भित्तिमपास्य यः,
शम्भु-पुत्रतयैव सोऽखिलमानुषान् समबोधयत्।
भ्रातृ-बन्धुमयानसौ मनुते न किञ्चदतोऽन्तरम्,
पश्य मित्र ! निजेक्षणेन न तत्समो भुवि वीक्ष्यते ॥२

और जिन्होंने एक भगवान् की सन्तान के नाते से ही जाति, वर्गविशेष, देश और भेद की भीत को हटाकर विश्वमानव को भाई-बन्धु के समान पुकारा। और उसी हेतु से उन्होंने कभी कोई अन्तर नहीं माना। अरे मित्र ! तू अपनी आंख से देख, संसारभर में उनके समान कोई ढूंढने पर नहीं दिखेगा।

हर्ष-दुःख-गणं विभज्य निरन्तरं मनुजेष्वसौ,
प्रैरयत्प्रियवृत्तिमत् पुनरेव शोभितजीवितम्।
मृग्यतामितिहास-पुस्तकमस्ति कोऽपि न तत्समः,
मन्मते जगतीतले यदि वर्त्तते स हि वर्त्तते ॥३

और इन्होंने सदा मनुष्य जाति के विषय में हर्ष और दुःख को बाँटकर एक बार फिर व्यवहारवाली सुहावनी जीवनी के लिए प्रेरणा दी। ए मित्र ! तू इतिहास की पुस्तक ढूंढ मार, किन्तु देख, तुझे उनके समान कोई भी न मिलेगा।

दर्शयत्प्रतिमानवं भगवानसौ सृतिमीदृशीम्,
यां प्रगृह्य जनः स्वयं विजहाति दुःखमरुन्तुदम्।
प्रेम-शान्ति-सुखैर्हसँल्लभते तदान्तमथायुषः,
नास्ति तेन समो महानधिभूतले पुरुषोऽपरः ॥४

इस भगवान् दयानन्द ने प्रत्येक मनुष्य को एक ऐसी सड़क दिखला दी, कि जिसको पकड़कर मनुष्य स्वयं दिल कचोटने वाले दर्द को दूर भगा देता है और तब फिर प्रेम, शान्ति और आनन्द से हंसता हुआ मनुष्य आयुष्य के अन्त को प्राप्त करता है। वस्तुतः इस पृथिवी पर उनके समान महान् कोई दूसरा मनुष्य नहीं है।

यस्तु भेद-गणं व्यपोह्य सुजीवनाय निदेशनम्,
सत्सृतेः कृतवान् प्रशस्तमशेषयुक्तिपुरस्सरम्।

स्वामिशङ्करनूतनः प्रतिवप्रमेष महीतले,
श्रेष्ठतां प्रविनक्ति तस्य मनोर्विधेश्च तु नैकषीम् ।।५

और फिर जिन महर्षि ने भेदों को मिटाकर अच्छे जीवन के लिए युक्तियों के साथ सच्चे सीधे मार्ग का उत्कृष्ट उद्बोधन दिया। ये महर्षि दयानन्द प्रतिक्षेत्र में स्वामी शङ्कराचार्य के समान नये ही एक शङ्कराचार्य थे। और उनकी बुद्धि तथा क्रिया की विशेषता कसौटी सम्बन्धी श्रेष्ठता प्रकट करती है।

योऽस्ति चास्य युगस्य दीधितिरेव सा प्रथमा द्युतेः,
सोऽस्ति देवदयानिधिर्भगवान् महान् पुरुषः स्वतः।
वर्त्तते प्रतिबिन्द्वसौ शुभ-कर्मशूर-वरो नरः,
प्रेम-शान्ति-विशुद्ध-बुद्धि-विकासकृत् प्रविचक्षणः ।।६

और जो इस युग के प्रकाश की पहली किरण, वे ही स्वतः भगवान् देवदयानन्द महान् पुरुष हैं। ये प्रतिबिन्दु पर शुभ कर्म के शूर श्रेष्ठ मनुष्य हैं और ये ही प्रेम, शान्ति पवित्र बुद्धि के विकास करनेवाले उत्कट मेधावी हैं।

क्रान्तिमानपि सर्वथा न तु शासनस्य न च स्तुतेः,
स्वामिवर्य इहेच्छति स्म पदं विचार-ततेर्महत्।
तस्य लक्ष्यमतोऽभवत् परिवर्त्तनं तु मतस्य तत्,
मानवस्य सनातनं मतमस्तु वैदिकमेव तत् ।।७

सब प्रकार से क्रांतिकारी होकर भी वे महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती न तो शासन की क्रांति चाहते थे और नहीं कोई अपनी प्रशंसा की क्रांति चाहते थे। वस्तुतः यदि चाहते थे तो वे विचारों की क्रांति का महान् लक्ष्य चाहते थे। इससे संसार के प्रचलित मतों का परिवर्तन चाहते थे कि मनुष्यजाति का सनातन सत्य वैदिकधर्म हो।

योऽप्यमन्यत मानवीं भुवि जातिमेव सदैककाम्,
वर्त्तते स्म दयानिधिर्भगवानसौ समतेश्वरः।
तस्य जातिरथैकका स च धर्म एष हि मानवः,
ज्ञानमेव ऋचासु सङ्गतमस्ति मित्र ! पुनः श्रुतेः ।।८

इस संसार में जो सदा एक ही मनुष्यजाति को मानते थे। वे समता के धनी भगवान् दयानन्द सरस्वती ही थे। उनकी एक ही मनुष्य जाति थी और उनका एक ही धर्म था, वह था, मानव धर्म। ए मेरे मित्र ! यह सब वह कोई अपनी ओर से नहीं कहते थे, वे कहते थे कि वेद भगवान् की ऋचाओं को एकबार देखलो कि मेरा यह ज्ञान वेद की ऋचाओं में मिलता है कि नहीं।

व्यश्वसत् प्रभुदत्तमेतदिहास्ति वैदिवाङ्मयम्,
वर्णितं यदपीति तन्न हि तत्समं पृथिवीतले ।
ज्ञानमन्यदिहस्त्यसौ मनुते स्म वेदवचोऽग्रणीः,
श्रद्धया भगवन्तमेवमवोचदेव जगत्पतिम् ॥९

महर्षि दयानन्द का दृढ़ विश्वास था कि इस संसार में यह वैदिक वाङ्मय ईश्वर की देन है और जो भी कुछ कहा गया है, उसके समान मानव की भूमि पर और कुछ अन्य ऐसा ज्ञान नहीं है। इसलिए वेदवाणी के नेता महर्षि दयानन्द श्रद्धा के साथ ऐसा कहते थे कि सृष्टि का स्वामी केवल भगवान् ही है।

योऽवदत् न हि केवलं करुणानिधिर्भगवानसौ,
युक्तिभिः प्रबलाभिरेव दृढोयति स्म यथोदितम् ।
प्रामिमीत स वेदमात्रमथेति सत्यवचोऽनुगः,
साध्यति स्म यथागमं प्रतिवादि-पण्डित-मण्डले ॥१०

दयासागर भगवान् दयानन्द केवल कहते ही न थे, किन्तु वे ऐसा ही कहा गया है, उसका अपनी प्रबल युक्तियों से समर्थन भी करते थे। किन्तु सत्यवचनानुरागी स्वामी दयानन्द वेदों से ही प्रमाण देकर समझाया करते थे और साथ ही प्रतिवादिपण्डितों के समुदाय में शास्त्रों के अनुसार अपनी बात को सिद्ध किया करते थे।

एतदस्ति सुनिश्चितं न हि विद्यते श्रुतिषु स्मृतम् ।
मन्त्रमेकमपीति तु किं पदमेकमेव च नान्यथा ।
स्यान्निरर्गलमेव सत्यसृतेः सदा प्रकृतेः परम्,
युक्तिवाधितमद्भुतं नियमेतरद् वचसोऽपथम् ॥११

यह बात पूर्णरूप से स्मृत है कि वेदों में एक मन्त्र की बात तो क्या, किसी मन्त्र का एक शब्द तक ऐसा नहीं होता कि जो सदा प्रकृति से परे हो, सच्चे मार्ग से असम्बद्ध हो, युक्तिविरुद्ध हो, अनोखा हो, नियमबाह्य हो और कहने के अयोग्य हो।

तस्य देवदयानिधेरयमेव निश्चय ऐधत,
प्रत्यहं मतमाप्यतेयमथ प्रतीक-विरोधिनी ।
यावदन्तमहो न चेति न तावदेति मतान्तता,
भेदमूलमतः स्वतः पुनरेधते जनभिन्नता ॥१२

उन दयासागर स्वामी दयानन्द का यह निश्चय ही इतना पक्का था जब तक वेद के वचनों की विरोधिनी यह मतमान्यता रहती है, जैसे कि मैं ईसाई हूं, मैं मुसलमान हूं, मैं जैन हूं, मैं बौद्ध हूं; मैं वैष्णव हूं, मैं राधास्वामी हूं या कि मैं रामस्नेही आदि हूं—यह अन्त नहीं होती, तब तक मतों का अन्त भी नहीं होगा। क्योंकि इससे स्वयं भेदों की जड़ जो जनभिन्नता है, वह फिर बढ़ती ही जाती है।

जाति-भेदक-भित्तयो न पतन्ति यावदिहैव ताः,
हेतवो बहवो भवेयुरिवेति सृष्टि-महापदः।
बुद्ध-योसु-मुहम्मदादि-मनुष्यजाति-विभेदकाः,
भेद-बोधक-दुर्गुणा विलयन्तु रक्तपिपासवः ॥१३

स्वामी दयानन्द चाहते थे कि जब तक ये जातियों की भेदक भीतें नहीं गिरतीं तब तक संसार में महाविपत्तियां हैं तथा इन महाविपत्तियों के समान और भी अनेक कारण हो सकते हैं। क्योंकि भेदों के बोधक दुर्गुण बुद्ध, ईसा-मसीह, मुहम्मद आदि ये मनुष्यजाति के टुकड़े करनेवाले हुए हैं जो कि ये मनुष्यों के खून के प्यासे हैं, विलीन होने चाहिएं।

जातिबन्धुरयं स्वतः समबोधयज्जगतीतलम्,
बन्धवो जगतो जना इति वेददेव इहाब्रवीत्।
भूमि-भेद-विषाद-नाशकमीश्वरीयगुणोदयम्,
वेदमेव भजन्तु तं भगवन्तमेव महत्तमम् ॥ १४

मनुष्य जाति के बन्धु इन स्वामी दयानन्द ने संसारभर को पुकार कर कहा कि ईश्वरीय पुस्तक वेद संसार भर के मनुष्यों को परस्पर में बन्धु हैं, ऐसा उद्बोधन करता है। इसलिए भूमि के भेद और विवादों का नाशक ईश्वरीय गुणों का विकासक सर्वमहान् भगवान् वेद है, अतः उसकी ही उपासना कीजिए।

नाशयन्तु महत्त्वमेव मतस्य तस्य विरोधिनः,
पालयन्तु निदेशनं भुवि वेदमातुरथेङ्गितम्।
शिक्षयन्तु समीक्षणं गुणदोषयोश्च तथात्मनः,
बोधयन्तु सदेन्द्रियस्य तु निग्रहं पुरुषोऽब्रवीत् ॥ १५

युगपुरुष स्वामी दयानन्द ने बताया था कि वेद के विरोधी मत का महत्त्व मिटा दीजिए, संसार भर में वेदमाता का इङ्गित उद्बोधन पालिए, तदनुसार

अपने गुण और दोषों की समीक्षा सिखाइये और सदा अपनी इन्द्रियों का निग्रह समझाइये।

काम-कोप-वशीश्वरोऽपि नरः स्वधर्ममथाचरेत्,
ब्रह्मचर्य-महाव्रतस्य तु सेवकस्य गुणव्रजम्।
आदरेद् विनयानतश्च परस्त्रियं भुवि मातरम्,
स्वामिवर्य उपादिशत् प्रभुवेदवाचमिहोत्तमाम्॥ १६

स्वामिश्रेष्ठ महर्षि दयानन्द ने भगवान् वेद की उत्तम वाणी का उपदेश किया था कि मनुष्य को काम और क्रोध का समर्थ विजेता होकर भी अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए, महाव्रत ब्रह्मचर्य के आराधक मनुष्य के गुणों का आदर करना चाहिए और विनय से झुककर संसार भर के मनुष्यों की पत्नियों को माता मानकर सम्मान दीजिए।

इच्छति स्म दयानिधिर्भगवानसौ गुरुगौरवः
प्रावसेद् भुवि निश्छला नरजातिरेव गुणोत्तमा।
एकमेवमतोन्द्रियं प्रभुमाविचिन्त्य हृदाऽत्मनः
पुण्य-पाप-विचारिका भुवि वेदधर्मधुरन्धरा॥ १७

महामहिम भगवान् दयानन्द चाहते थे कि इस पृथिवी पर ऐसी मनुष्य जाति आबाद होनी चाहिए, जो कि पुण्य और पाप का विचार रखती हो और जो एक निराकार ईश्वर ही को अपने हृदय से सोचकर छलरहित विशिष्ट गुणवती, गुरुवेद के बताए हुए धर्म-भार को ढोने वाली हो।

आत्म-भूत-विवादयोश्च विचारदर्शनयोस्तथा,
तस्य देवदयानिधेरपि वर्त्तते स्म समन्विति:।
सत्यनीत्युभयात्मनः शुभजीवनस्य निदेशकः,
सोऽभवत् क्षितिमण्डले विकृतस्य तस्य विरोधकः॥ १८

स्वामी दयानन्द ने ज्ञान के क्षेत्र में जो विचारशक्ति दिखलाई, वह अध्यात्मवाद और भौतिकवाद की समन्विति थी। वे सत्य और नीति के शुभ जीवन के उद्बोधक थे और संसार भर से सत्य और नीति से शून्य जीवन के विरोधक थे। वस्तुतः ऐसे अनोखे अद्वितीय दार्शनिक महर्षि थे।

सोऽस्ति योगिवरो महान् विरलो हि दर्शनकेसरी,
चिन्तकेषु विशिष्ट एव तु गीष्पतिर्विदुषां गणे।

सार-शोद्धृषु साधको गुरुरेव शिक्षक-शिक्षणे,
स्वामिनोऽस्य तुलां वहेन्न हि देवतासु जनेषु कः ।। १६

वे स्वामी जी महान् योगिश्रेष्ठ थे, अकेले दर्शनकेसरी थे, विचारकों में वे विशिष्ट विचारक ही थे, विद्वन्मण्डल में तो वे बृहस्पति ही थे, तत्त्व-निश्चायकों में वे साधक थे और आचार्यों के मार्गदर्शन में गुरु थे। अत एव देव दयानन्द की बराबरी जब कोई देवताओं में से न कर सका तो फिर मनुष्यों में से कोई क्या कर पायेगा, अर्थात् प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। वाह रे स्वामी दयानन्द ! आप आप ही हो।

श्रेष्ठताऽथ निकृष्टता न तु मन्यते स्म महर्षिणा,
जन्मनः प्रथया, परन्तु सता गुणेन च कर्मणा।
जातिरेव जनस्य सम्प्रति गण्यते न पृथग्गुणा,
तत्र नो लघुता न वा महतो गुणस्य विशेषता ।। २०

महर्षि दयानन्द ही सर्वप्रथम आचार्य हुए, जिन्होंने जाति की श्रेष्ठता अथवा निकृष्टता जन्म की प्रथा से नहीं मानी, अपितु सद्गुण और सत्कर्म से जाति की श्रेष्ठता बताई। यह उन्हीं महर्षि की कृपा है कि आजकल ऊंच-जाति कोई नहीं मानी जाती। उत्पत्ति के कारण न कोई उच्च है, न कोई नीच, अपितु व्यक्ति गुण और कर्म के कारण ही उच्च अथवा नीच हो सकता है, अन्यथा नहीं

सत्यमूर्तिमहात्मना भुवि तेन योगिवरेण तत्,
मूलमेव विनाशितं शृणु जाति-भेद-विषस्य मे।
मित्र ! यत्र तमोऽवसद् वद गाढमत्र न भूतले,
ज्योतिरद्भुतमस्ति यत् कृपयैव तस्य दयानिधेः ।। २१

सत्य की मूर्ति महात्मा योगिवर स्वामी दयानन्द सरस्वती ने, ए मेरे मित्र ! सुन, मेरे जाति-भेद रूप विष की जड़ ही काट डाली और जहां जहां घोर अन्धकार था, वहां वहां इस संसार में अद्भुत ज्योति जगा दी। यह जो भी कुछ हुआ है, सब उस दया के सागर स्वामी दयानन्द की कृपा से ही हुआ है।

यद्धि मानसमेव तत् मलिनं कृतं तु वितण्डिभिः,
प्रोज्ज्वलं समभूददोऽन्ध-विचार-पद्धति-सेवकैः।
पुण्यभूमिनिवासिनोऽस्य जनस्य देवदयालुना,
तेन सन्मुनिना दृढेन करेण संस्फुटितं यतः ।। २२

जिस हृदय को अन्ध श्रद्धा और रूढि के ठेकेदारों ने मैला-कुचैला कर डाला था, परमदयालु उस सच्चे मुनि स्वामी दयानन्द ने अपने मजबूत हाथ से खोलकर सत्य के प्रकाश से, इस पुण्य भूमि के अधिवासी मनुष्य के उसी हृदय को फिर एक बार जगमगा दिया। ओह क्या कहने अपने महर्षि के !

वेद-बोधित-मार्ग एवं विकासितोऽस्ति महर्षिणा,
विश्वबोध-धरेण सद्गुणवृत्तिना पुनरेष नः।
सोऽतिवृद्ध इव प्रकाश-विभासितोऽस्ति च दर्पणः।
गम्यतां सुपथा तदाभिनिमन्त्रितैर्मनुजैस्ततः ॥ २३

सद्गुण और सत्प्रवृत्ति के अन्तर्वाणि महर्षि दयानन्द ने एक बार पुनः हम सभी के लिए यह वेद का उद्बोधित मार्ग प्रशस्त कर दिखाया है जो कि प्रकाश से झिलमिलाते हुए साफ-सुथरे दर्पण के समान है, उस प्रशस्त मार्ग से चलने के लिए सभी मनुष्य निमन्त्रित हैं, आइये, हम सब को उसी प्रशस्त मार्ग से चलना चाहिए।

वर्तते स्म महात्मनोऽस्य मनः स्वतो जगदीश्वरे,
तन्मनश्च बलं धनं यदपीह वा भुवि विद्यते।
तस्य सत्पुरुषस्य तेन बलेन यद्धि विनाशितम्,
पापकर्म जनैः कृतं गुरु-दत्त-बुद्धि-विरोधिभिः ॥ २३

इन महात्मा, महर्षि दयानन्द का हृदय स्वतः जगदीश्वर के विषय में संलग्न रहता था, वह संलग्न हृदय ही महर्षि दयानन्द का बल, धन-सम्पत्ति अथवा जो भी कुछ समझिये, जो था, उस सत्पुरुष महर्षि के बल अथवा सामर्थ्य ने ही ऋषियों की दी हुई प्रज्ञा के विरोधी मनुष्यों ने जो जघन्य कार्य किया, वह नष्ट कर दिखाया। ए महर्षे दयानन्द ! वास्तव में आप धन्य हो।

सोऽभवद् विजयी विरोधिजनस्य बुद्धि-विवेकयोः,
कर्मणश्च बलस्य दुर्गुण-शक्ति-सम्पद एव वा।
स्वामिदेवदयानिधिर्भगवानसौ पुरुषोत्तमः,
केवलस्य न भारतस्य च किन्त्वहो जगतः स्वतः ॥ २५

वे महर्षि दयानन्द सरस्वती उन विरोधियों की बुद्धि और विवेक के, कार्य, बल के अथवा दुर्गुणों की शक्ति रूप सम्पत्ति के विजेता ही हुए। अत एव ये स्वामिदेव दयानिधि दयानन्द न केवल भारत के, अपितु संसार के स्वतः भगवान् पुरुषोत्तम बन जाते हैं।

मूर्तिपूजन-कृष्णजन्म-विशिष्टजाति-विरोधिनः,
तस्य देवदयानिधेर्महिमानमेति कदापि कः।
कोऽकरोद् महिलाजनस्य शुभोदयं त्वधिभारतम्;
हे ऋषे! न हि वर्त्तते जगतीह कोऽपि विना त्वया ॥ २६

मूर्तिपूजन, ईश्वरजन्म और विशिष्ट जाति के विरोधी उन देव दयासागर स्वामी दयानन्द की महिमा को कभी कोई पहुंच सकता है? अपितु कोई नहीं पहुंच सकता। भारत में स्त्रियों का उद्धार किसने किया? अपितु किसी ने नहीं किया। हे ऋषिवर! इस संसार में तुम्हारे बिना कोई भी नहीं है।

ज्ञान-रश्मिमवाप्य देवदयानिधेर्ऋषिराजतः,
मर्त्यलोकनरा यथा सम्वाप्नुवन्ति विभावसोः।
सुप्रकाशमवाप्नुवन्त्यपरेऽधुनातनमानवाः,
पुत्र-पौत्र-समा वयं हितकारिणोऽस्य महात्मनः ॥ २६

देव दयासागर महर्षि दयानन्द से ज्ञान की किरण, संसार के मनुष्य, जैसे सूर्य से स्वच्छ प्रकाश प्राप्त करते हैं और उन मनुष्यों से दूसरे हम आज के मनुष्य स्वच्छ ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करते चले आरहे हैं अत एव हम सभी, इन परोपकारी महात्मा स्वामी दयानन्द सरस्वती के पुत्र और पौत्र के समान हैं।

पर्युदञ्चनिनो वयं स्म इहास्य देवदयानिधेः,
भारतीयजना न केवलमेव सन्ति जना भुवः।
वित्त जीवनवृत्तमेवमधीत्य यूयमथ स्वयम्,
ज्ञास्यथेति महानियान् न हि वर्त्तते स्म न चास्त्यहो ॥ २८

यहां इस मनुष्य जाति के ऊपर उपकार करने पर न केवल आर्यावर्त्त के मनुष्य ही, किन्तु पृथिवीमात्र पर बसे हुए हम सभी मनुष्य, उस देव दयासागर महर्षि दयानन्द के ऋणी हैं। इस बात को तुम अपने आप उनके जीवन की कहानी को पढ़कर ही समझलो तो अच्छा है। अरे! इस पृथिवी पर, न तो इतना बड़ा कोई हुआ और न है। रह गई भविष्य की, सो वह जगत्-पिता परमात्मा ही जाने!

सत्यमूर्ति-तपोधनादिविशेषणं यदि युज्यते,
युज्यते तु दयानिधौ भगवत्यथात्र हि केवलम्।

श्रद्धयैव वदन्ति ये जयघोषमस्य दयानिधेः,
स्वामिनो मनुजाश्च ते गुणिनोऽपि तत्त्वविवेकिनः ॥ २६

इस संसार में सत्यमूर्ति और तपोधन आदि जैसा विशेषण यदि प्रयुक्त होता है तो वह विशेषण केवल इन दयासागर गुणाकर भगवन्त दयानन्द सरस्वती महाराज के विषय में ही उपयुक्त प्रतीत होता है और जो मनुष्य इस दयासागर स्वामी जी की जय-जयकार करते हैं। करते तो वे श्रद्धा से ही हैं, किन्तु मानना पड़ेगा कि वे मनुष्य, वास्तविक गुणी और विवेकी भी हैं। नहीं तो यहां पर जय-जयकार प्रसाद के लिए करते हैं अथवा स्वार्थ के लिए मुंह खोलते हैं।

तं नमामि मुहुर्मुहुर्भगवन्तमेव दयानिधिम्,
योगिनं जगतः प्रभोस्तनयं मनुष्यशिरोमणिम्।
कोटिवारमहं नतोऽस्मि तु तस्य सृष्टिपतेः स्वयम्
पादयोर्दयया विभोश्च तनोमि वृत्तमतोऽस्य यत् ॥ ३०

अत एव मैं उन योगिवर, पुरुषोत्तम, दयासागर और जगत् के स्वामी के पुत्र महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती को बार-बार नमन करता हूं। मैं तो उस जगत्-पिता के चरणों में स्वयं कोटिशः नतमस्तक हूं और इस कारण मैं मानता हूं कि मुझ पर ईश्वर की कृपा है, जिससे मैं इन महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज के वृत्त को विस्तृत कर रहा हूं।

यस्तु धर्ममुपादिशज्जगदुद्धरन् भुवि वैदिकं
निर्गुणो भवन्नहो दययाऽस्मि जातु जगत्पतेः।
ग्रन्थयामि यशस्करं गुणविस्तरं विरलोदयम्,
स्वामिनोऽस्य तव प्रियस्य सदाशयस्य दयानिधेः ॥ ३१

ए ईश्वर! जिस स्वामी दयानन्द ने पृथिवी पर जन को उबारते हुए वैदिक धर्म का उपदेश किया, ऐसे इन प्यारे, दूरद्रष्टा और दया के सागर स्वामी महाराज अद्वितीय, यशस्वी और गुणों के अम्बार को क्या कभी लिख सकता हूं! क्योंकि मैं अबोध हूं फिर भी लिख रहा हूं तो जगत्पति भगवान् की कृपा से लिख रहा हूं, अर्थात् और इससे अधिक क्या कह सकता हूं?

शुद्धमोक्षस्य बोद्धारम्, मातृशक्तेः प्रशंसकम्।
सत्यार्थस्योपदेष्टारम्, कर्त्तारञ्चार्यसंसदः ॥ ३२

शुद्ध मोक्ष के ज्ञाता, मातृशक्ति के प्रशंसक, सत्य अर्थ के उपदेशक और आर्यसमाज के संस्थापक— (कलापकम्)

वेदमातुर्विशुद्धार्थम्, प्रज्ञोपज्ञं सुलक्षणम् ।
पीत्वा स्तन्यं यथा मातुः, हृष्टा पुष्टो वृषार्भकः ।। ३३

स्वामिवर्य दयानन्द सरस्वती महाराज वेदरूपी माता के पूर्ण शुद्ध अर्थ को जो कि प्रज्ञोपज्ञ और सुलक्षण है—उसको, जैसे माता के दूध को पीकर गौ का बच्चा—

रौत्युद्घोषमिवोद्ग्रीवः, तद्वद्व्याख्यानमादिशन् ।
शोभते स्म दयानन्दः, स्वामिश्रेष्ठः सरस्वती ।। ३४

गर्दन उठाकर जैसे हूंकने लगता है, ठीक उसके समान शिर उठाकर गरजते हुए व्याख्यान को देते हुए सोहते थे ।

वेदमार्गस्य स्रष्टारम्, संसारस्योपकारकम् ।
तं नमामि दयानन्दम्, स्वामिनं पुरुषर्षभम् ।। ३५

ऐसे वेद-मार्ग के उत्पादक, संसारभर के उपकारी पुरुषोत्तम उन स्वामी दयानन्द को आदर से नमन करता हू ।

सरस्वत्युपनाम्नोऽस्य, महर्षेः श्रीमतो यशः ।
दयानन्दस्य देवस्य, सत्यं नित्यं प्रवर्द्धते ।। ३६

महर्षि श्रीदयानन्द सरस्वती जी महाराज की सत्य कीर्ति दिन प्रतिदिन बढ़तीही जारही है ।

पं० रमाशंकर शास्त्री

---

(४९) जिज्ञासुमूलशंकरः

अथैकदाऽपृच्छदसौ कुमारो विधिः पितः कः शिवरात्रिकाले।
चिकीर्षुरस्म्यद्य शिवव्रतं मां कथां फलं चास्य वदाशु तूनम् ॥ १

एक बार शिवरात्रि के अवसर पर शंकर जी के व्रत (उपवास) के इच्छुक कुमार मूलशंकर अपने पिता से पूछने लगे—हे तात ! शंकर जी के व्रत की क्या कथा है ! इसका क्या फल और महत्त्व है ? मुझे कृपाकर बतलाइये।

पुत्र प्रतीहीह जनः स धन्यः सुखं परत्रापि लभेत शंवः।
योऽस्यां तिथौ सोम्य शिवस्य पूजां क्रियादनिद्रो विधिना व्रती सन् ॥ २

पिता ने उत्तर दिया—हे पुत्र ! वह शिवभक्त मनुष्य धन्य है, जो इस शिवरात्रि के पावनपर्व में उपवास धारण करके और रात्रिभर जागरण करके विधिवत् शंकर जी की पूजा करता है वह तो इस लोक में ही नहीं परलोक में भी सुख पाता है।

इतीव पित्रा परितोष्यमाणो न शंकरोऽमन्यत मूलपूर्वः।
मनागसौख्यं स जगाद वाक्यं व्रतं करिष्ये त्वनुमन्यतां भोः ॥ ३

पिता के द्वारा इस प्रकार समझाये जाने पर पुत्र मूलशंकर इस कार्य में लेशमात्र कष्ट न मानते हुए तुरन्त बोल उठे—पिताजी ! मुझे आज्ञा दीजिए, मैं अवश्य व्रत करूंगा।

तथा निशम्याथ पिता स्वपुत्रं निनाय तस्माच्छिवमन्दिरं तत्।
जनाः समाजग्मुरुपासनायै यदुग्रभक्ता व्रतिनः सुदूरात् ॥ ४

पुत्र से ऐसा उत्तर पाकर पिता उसको घर से शिवालय में ले गए, जहां कि शिवजी की पूजा के निमित्त दूर दूर से आये हुये भक्तलोगों की बड़ी भीड़ हो रही थी।

देवालयोऽशोभत पत्रपुष्पैः प्रदोपदानैश्च कथार्चनाभिः।
घण्टादिनादैश्च निशीथमध्ये क्रमेण भक्ताः किल स्वापमापुः ॥ ५

उस समय उस शिवालय की उपासकों द्वारा चढ़ाये गये पत्र-पुष्प-दीपक-दान और शंख-घण्टादि के शब्दों तथा कथा और पूजाओं से गुंजित वायुमण्डल से

बड़ी शोभा हो रही थी। अर्धरात्रि के बीत जाने पर भक्त लोग एक-एक करके निद्रामग्न होगये।

पिता तदानीमुपपीड्यमान: क्षुधादिभि: क्षिप्रमगात्तु निद्राम्।
पिनाकिलिंगं खलु प्रेक्षमाण: पुत्रोऽस्वपन्नैव व्रती क्षपायाम्॥ ६

उस समय बालक मूलशंकर के पिता भी, जो कि दिनभर के उपवास और भूख-प्यास से दुर्बल पड़ गये थे, सो गये। किन्तु उनका यह पुत्र अपने व्रत को सफल करने की भावना से शिवलिंग को टकटकी दृष्टि से देखता रहा और जागता रहा।

अथ मनुजभयमुक्तो मोदकान् भोक्तुकाम:
शिवनिलयमुपागात् पार्श्वत: कश्चिदाखु:।
निकटतम य आसीद् बालको वीक्षमाणो
न तमपि लभमान: खादितुं तान् प्रवृत्त:॥ ७

इतने ही में शान्त वातावरण को पाकर मनुष्यों के भय से रहित हुआ, पास में से कोई चूहा मन्दिर में चढ़ाये गये मिष्ठान्नादि को खाने की इच्छा से शिवलिंग के इर्द-गिर्द फुदकने लगा और पास ही में बैठे हुए बालक मूलशंकर को भी न देखता हुआ उन लड्डुओं को खाने लगा।

महादेव: शक्तस्तमिह परिहातुं किमुत नो,
इयत्क्षुद्रं जन्तुं निजवदनविष्टं कलुषितम्।
न चेद् रोद्धुं शक्तो न खलु भवितुं सोऽर्हति शिवो,
वितर्काज्जिज्ञासा ह्यत उरसि जातास्य महती॥ ८

इस प्रकार चूहे को चोरी तथा उपद्रव करता हुआ देखकर बालक मूलशंकर जिज्ञासापूर्वक मन में विचारने लगा "क्या त्रिलोकीनाथ महादेव जी अपने वदन पर नाचते हुये इस दुष्ट चूहे को, जो एक छोटासा जन्तु है, हटाने में समर्थ नहीं हैं? यदि नहीं, तो नि:सन्देह ये वे शिव नहीं हैं, जिनका मैंने पितृमुख से माहात्म्य सुना था।"

"जन्माद्यस्य यतो" मुहुर्मुहुरिदं वेदान्तिभि: स्मर्य्यते,
क्लेशादेरपवृक्तपूरुषविशिष्टो योगिभिर्ध्यायते।
ब्रह्मात्मामृतदेवखंप्रभृतिभि: शब्दै: श्रुतौ श्रूयते,
साक्षाद्दृष्ट उपायतो मम भवेद् देवस्तथाऽहं यते॥ ९

जो ब्रह्म "जन्माद्यस्य यतः" (ब्रह्मसूत्र १।१।२) अर्थात् जिससे जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय हुआ करते हैं) इत्यादि ब्रह्मसूत्रों में प्रतिपादित है और निरन्तर वेदान्तियों के द्वारा स्मरण किया जाता है और जिसके स्वरूप को "क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः" (योगदर्शन, सूत्र १.१।१४) (अर्थात् पुरुषपदवाच्य ईश्वर दुःखों, कर्म के फलों और वासनाओं से सर्वथा रहित है)—इत्यादि रूप में समझते हुए योगी लोग ध्यान करते हैं और जो परमात्मा ब्रह्म (महान्), आत्मा (सर्वान्तर्यामी, सर्वव्यापक), अमृत (अविनाशी), देव (स्वप्रकाशस्वरूप और सुखों का दाता), खम् आकाशवत् महान् और व्यापक), इत्यादि नामों से वेदादि शास्त्रों में वर्णित है, उसका जिस विधि और उपाय से साक्षात्कार हो, वैसा प्रयत्न मुझे करना चाहिये—ऐसा मूलशंकर ने निश्चय किया।

नाना विघ्नान् सततमवपश्यन् स ईशानलक्षी,
स्वल्पं सौख्यं न खलु गृहमध्ये कदापीह लेभे।
गेहाद् वर्णी समयमुपलभ्याथ निष्क्रान्त इत्थं,
पश्चात् ख्यातो जगति यतिवर्यो दयानन्दनामा ।। १०

सुतरां ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति को ही अपना चरमलक्ष्य बनाये हुये उस ब्रह्मचारी को घर में रहते हुये चारों ओर से अनेक बाधायें दीखने लगीं। जिसके कारण उसे घर में अब लेशमात्र भी सुख का अनुभव न होने लगा।

परिणामस्वरूप एक दिन अवसर पाकर वह योगियों की खोज में घर से निकल पड़ा। तदनन्तर वर्षों तक समस्त भारतवर्ष में भ्रमण और सत्संग द्वारा ज्ञानोपार्जन करता हुआ अन्त में अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल होगया और यतिवर महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती नाम से संसार में विख्यात हुआ।

पं० जयदत्त शास्त्री उप्रेती

o——o

(५०) धन्यो दयानन्दो यतिः

का नु स्याच्च दया ? जगद्धिततमा या न्यायपूर्वा मता ।
आनन्दश्च समस्तलोकजनतासौख्येन यः प्रोज्ज्वलः ।
को वाऽभूत् सदयोऽत्र पीड़ितजने लोकस्य चानन्ददः ।
वेदज्ञानसुधाप्रदो गुरुदयानन्दः सुमन्त्रप्रदः ॥ १

संसार का अधिकतमहित करनेवाली तथा न्यायपूर्वक की जानेवाली दया क्या है ? समस्त लोगों के सौख्य से प्रोज्ज्वल आनन्द क्या है ? पीड़ितों के प्रति दयालु तथा लोक को आनन्द देनेवाला कौन हुआ है ? इन प्रश्नों का उत्तर एक ही है—सुमंत्रदाता तथा वेद ज्ञानरूपी अमृत प्रदान करनेवाला गुरु दयानन्द ।

मिथ्यावादपरम्पराभिरभिमतो दूरीकृतां विस्मृताम् ।
अन्धेनेव विवेकशून्यमतिभिर्नालोचितां सन्तताम् ।
वेदज्ञाननदीं भगीरथ इवानन्दोर्मिसन्दोलिताम् ।
देवर्षिः स हि जाह्नवीमिव पुनर्ह्यानीतवान् नो गृहे ॥ २

मिथ्या परम्पराओं के वशवर्ती होकर हम जिससे दूर होगये थे और जिसे भुला दिया था, अन्धे की भांति विवेकशून्य होकर हमने अपनी आलोचनाशक्ति को कुण्ठित कर दिया अतः जिसे हम सर्वथा भूल चुके थे, उस वेदज्ञानरूपी गंगा को जो आनन्द की लहरियों से आन्दोलित हो रही थी, वह देवर्षि दयानन्द भगीरथ के तुल्य पुनः हमारे घर तक ले आया ।

सन्यस्तसौख्यो जनतासुखाय देवाय च त्यक्तसमस्तदेवः ।
वेदाय चालोचितचारुवेदः, त्राणाय लोकस्य च भुक्ततापः ॥ ३

उसी दयानन्द ने जनता के सुख के लिये अपने सुख का परित्याग किया, परमदेव परमात्मा की प्राप्ति के लिये उसने अपने माता-पिता आदि देवों को त्यागा, वेदों के उद्धार के लिये ही जिसने सुन्दर वैदिकवाङ्मय की आलोचना (विवेचना) की तथा संसार की मुक्ति के लिये जिसने स्वयं कष्ट उठाये ।

मूकाय लोकाय च वेदवागदः तापाभितप्तस्य च शान्तिदो यः ।
उत्थापको यः खलु मूर्च्छितस्य चोद्धारको यः पतितस्य देवः ॥ ४

जिसने गूंगे के तुल्य लोगों को वेदवाणी प्रदान की, जो तापपीड़ित लोगों को शान्ति देनेवाला था, जिसने मूर्च्छित जनता को पुनः सावधान कर उठाया तथा पतितजनों का उद्धारक था, वह देव दयानन्द ही था।

धन्वन्तरिर्नष्टदशां नराणां मार्गात् परिभ्रष्टजनस्य नेता।
दाताऽधिकारस्य तथाऽङ्गनाभ्यो धन्यो दयानन्दयति सः दिव्यः॥ ५

जो नष्टप्रायः लोगों में पुनः प्राण फूंकनेवाला धन्वन्तरि वैद्य था, जो मार्गभ्रष्ट लोगों को पुनः सत्पथ पर ले जानेवाला नेता था, जो नारियों को उनके अधिकार दिलानेवाला था, वह दिव्ययति दयानन्द धन्य है।

न चास्ति काचित् सुखदा प्रवृत्तिः नास्ति तथैवाभ्युदयस्य मार्गः।
परिष्कृतो नैव महर्षिणा यः सदा दयानन्दमयेन तेन॥ ६

उस दया और आनन्द से परिपूर्ण महर्षि ने जिसका परिष्कार न किया हो, ऐसी कोई सुखदायक प्रवृत्ति नहीं है और न कोई उन्नति का ऐसा मार्ग ही है।

—पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी वैद्य

o——o

कवि-परिचय

परिशिष्ट

१. शंकर शास्त्री केरलीय—

केरल निवासी शंकर शास्त्री लिखित पांच पद्य महाशय मुन्शीराम जिज्ञासु ने ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (प्रथम भाग—पृ० ४४०-४४१ पर) में संकलित किये थे। इनका परिष्कार किसी यमुनाशंकर शर्मा ने किया था।

२. पं० ज्वालादत्त शर्मा—

स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों के लेखक, उनके शिष्य तथा वैदिक यन्त्रालय के प्रबन्धक (कुछ काल तक) रहे। पं० गोपालराव हरि सम्पादित दयानन्द दिग्विजयार्क के तृतीय खण्ड में ये श्लोक सर्वप्रथम प्रकाशित हुए थे। महर्षि वियोग शोक शीर्षक से ये १९५५ वि० में पृथक् पुस्तकाकार भी छपे थे। इनसे स्वामी जी के जन्म वर्ष १८८१ वि० तथा नाम मूलशंकर का ज्ञान होता है।

३. बैरिस्टर रामदास छबीलदास—

स्वामी दयानन्द के प्रसिद्ध गुजराती भक्त छबीलदास लल्लूभाई के पुत्र तथा पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के साले थे। श्रद्धांजलिपरक ये पद्य रामदास ने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय से लिखकर भेजे थे, जहां वे उस समय अध्ययनरत थे। स्वामी जी के अनेक प्राचीन जीवन चरितों में ये उद्धृत किये गये हैं।

४. पं० हनुमानप्रसाद मिश्र—

आर्य प्रतिनिधि सभा पश्चिमोत्तर प्रदेश (उत्तरप्रदेश) के उपदेशक थे। फर्रुखाबाद से प्रकाशित होनेवाले भारत सुदशा प्रवर्त्तक के एक पुराने अंक में ये पद्य प्रकाशित हुए थे।

५. पं० सत्यव्रत शर्मा—

स्वामी दयानन्द के आद्य शिष्य पं० भीमसेन शर्मा के जामाता थे। शर्मा जी के आर्यसमाज त्याग देने पर भी पं० सत्यव्रत शर्मा की स्वामी दयानन्द एवं उनकी संस्था के प्रति आस्था अडिग रही। इनके द्वारा लिखित स्वामी दयानन्द के हिन्दी जीवनचरित (प्रकाशनकाल १९०३) के अन्त में विनयाष्टक शीर्षक, ये आठ पद्य प्रकाशित हुए थे।

६. म. म. आर्यमुनि—

आर्यसमाज के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् तथा अनेक शास्त्रों के भाष्यकार थे। इनके द्वारा रचित ये पद्य मन्तव्यप्रकाश से संकलित किये गये हैं।

७. पं० दिलीपदत्त शर्मा —

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में संस्कृत के अध्यापक तथा संस्कृत के प्रतिभासम्पन्न कवि थे। इनका 'मुनि चरितामृतम्' काव्य स्वामी दयानन्द के जीवन को लेकर लिखा गया है। दयानन्दाष्टक शीर्षक ये आठ पद्य आर्यमित्र के दयानन्द जन्म शताब्दी अंक (१९२५ ई०) में प्रकाशित हुए थे।

८. पं० हरिदत्त शर्मा —

आगरा निवासी पं० भीमसेन शर्मा के पुत्र प्रख्यात विद्वान् पं० हरिदत्त शास्त्री डी०ए०वी० कालेज, कानपुर में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद भी रहे थे। यति-पंचकम् का प्रकाशन आर्यमित्र के दयानन्द जन्म शताब्दी विशेषांक में हुआ था।

९. पं० लोकनाथ तर्कवाचस्पति—

पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) के निवासी पं० लोकनाथ आर्यसमाज के विख्यात विद्वान् वक्ता तथा शास्त्रार्थमहारथी थे। उनके द्वारा रचित स्वामी दयानन्द विषयक यह संकृत पद्य उनकी काव्यकृति ऋषिराज चालीसा के अन्त में संकलित हैं।

१०. शुक्रराज शास्त्री—

नेपाल निवासी प्रसिद्ध आर्य विद्वान् तथा वैदिक धर्म के निष्ठावान् प्रचारक थे। जिन्हें नेपाल की राणाशाही ने १९४१ ई० में फांसी पर लटका दिया था। दयानन्द-प्रशस्ति का यह पद्य शास्त्री जी के पिता पं० माधवराज जोशी की जीवनी से लिया गया है। जिसे पं० शुक्रराज शास्त्री ने ही लिखा था।

११. पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी—

हिन्दी के प्रमुख साहित्यकार, लेखक तथा सरस्वती पत्रिका के सम्पादक थे। द्विवेदी जी ने महर्षि-वन्दना का यह पद्य अपनी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर की यात्रा के अवसर पर लिखा था।

१२. पं० रामजीलाल शर्मा—

हिन्दी के विख्यात लेखक तथा पत्रकार थे। प्रयाग में इन्होंने हिन्दी प्रेस की स्थापना की तथा विद्यार्थी नामक पत्र प्रकाशित किया।

१३. स्वामी कर्मानन्द सरस्वती —

जन्मना जैन मतावलम्बी थे। इनका मूल निवास स्थान भिवानी (हरयाणा) था। कालान्तर में आर्यसमाजी बनकर जैन मतावलम्बियों से अनेक शास्त्रार्थ किये। जैनमत विषयक अनेक आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखे।

१४. पं० मेधाव्रताचार्य—

येवला (जिला नासिक) निवासी पं० मेधाव्रताचार्य दयानन्द दिग्विजय महाकाव्य के प्रणेता तथा संस्कृत के रससिद्ध कवि थे। उनकी स्वामी दयानन्द विषयक स्फुट कविकताएं परोपकारी (अजमेर) में प्रकाशित हुई थीं।

१५. पं० बुद्धदेव विद्यालंकार—

आर्यसमाज के विख्यात वैदिक वक्ता, गुरुकुल कांगड़ी के लब्धप्रतिष्ठ स्नातक तथा उत्तम वक्ता पं० बुद्धदेव विद्यालंकार ने संस्कृत तथा हिन्दी में सुन्दर काव्य रचना भी की है।

१६. पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति--

आर्यसमाज के विख्यात विद्वान् तथा गुरुकुल कांगड़ी के प्रतिष्ठित स्नातक थे। महापुरुष कीर्तनम् शीर्षक उनके काव्य-संग्रह में महर्षि दयानन्द विषयक कविता प्रकाशित हुई थी।

१७. श्री वल्लभदास भगवान् जी गणात्रा—

कच्छ (गुजरात) के निवासी लोहाणा वैश्य थे। इनके स्वामी दयानन्द विषयक ललित संस्कृत पद्य १९८८ वि० में पुस्तकाकार प्रकाशित हुए थे।

१८. डा० मुन्शीराम शर्मा सोम—

डी०ए०वी०कालेज कानपुर के भूतपूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० सोम प्रख्यात समालोचक तथा लेखक हैं। स्वामी दयानन्द विषयक उनके पद्य आर्यमित्र में प्रकाशित हुए हैं।

१९. आचार्य विश्वश्रवा—

आर्यसमाज के प्रख्यात विद्वान् आचार्य विश्वश्रवा बरेली निवासी हैं। स्वामी दयानन्द के प्रशस्तिपरक ये पद्य उनके द्वारा लिखित ऋग्वेद-महाभाष्य के मंगल श्लोकों से संगृहीत किए गए हैं।

२०. पं० यज्ञदत्त अक्षय—

अजमेर के निवासी स्व० यज्ञदत्त अक्षय राजस्थान में जिला प्रचार अधिकारी पद पर कार्यरत रहे। प्राकृतिक चिकित्सा तथा बालचर आन्दोलन में इनकी गहरी रुचि थी।

२१. पं० जनमेजय विद्यालंकार—

गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक तथा डी०ए०वी० कालेज कानपुर में संस्कृत के प्राध्यापक थे। आपके द्वारा रचित महर्षि विषयक ये पद्य अभिनवकाव्यम् शीर्षक ग्रन्थ में संगृहीत हैं। यह काव्य उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुका है।

२२. पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री—

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक, आर्यजगत् के भूतपूर्व सम्पादक तथा प्रसिद्ध विद्वान् पं० त्रिलोकचन्द्र शास्त्री की महर्षि विषयक स्फुट कविताएं आर्यजगत् के विशेषांकों में प्रकाशित होती रही हैं।

२३. पं० ब्रह्मानन्द शास्त्री—

कासगंज (जिला एटा) निवासी हैं। इनकी यह कविता टंकारा पत्रिका (मई १९६१) तथा आर्यमित्र (१८ वैशाख १८८० शकाब्द) में प्रकाशित हुई थी।

२४. श्री नलिन विद्यावागीश—

आपकी संस्कृत रचना आर्यमित्र में प्रकाशित हुई है। विशेष परिचय उपलब्ध नहीं हुआ।

२५. पं० सत्यमित्र शास्त्री—

गोरखपुर जिले के बडहलगंज ग्रामवासी पं० सत्यमित्र शास्त्री आर्यसमाज के ख्यातिप्राप्त विद्वान्, वक्ता तथा शास्त्रार्थ महारथी हैं।

२६. प्रा० हरिश्चन्द्र रेणापुरकर—

गवर्नमैंट कालेज गुलबर्गा में संस्कृत के प्राध्यापक (अब अवकाश प्राप्त) श्री रेणापुरकर की अनेक संस्कृत कविताएं गुरुकुल पत्रिका तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं।

२७. पं० जगन्नाथ शास्त्री—

डी०ए०वी० हायर सैकण्डरी स्कूल श्रीनगर (काश्मीर) में संस्कृत के अध्यापक थे। इनकी यह कविता गुरुकुल पत्रिका (कार्तिक २०२१ वि०) में छपी थी।

२८. डा० प्रशस्यमित्र शास्त्री—

फिरोज गान्धी कालेज रायबरेली के संस्कृत विभाग में प्राध्यापक थे। डा० शास्त्री संस्कृत के सिद्धहस्त कवि तथा विद्वान् हैं। आपकी हास्य रस पूर्ण संस्कृत रचनाएं पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुकी हैं। आपने दयानन्द एवं महीधर के यजुर्वेद भाष्यों का तुलनात्मक अध्ययन अपनी पी-एच०डी० की उपाधि के लिये किया था। आपका यह शोध-ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

२९. डा० कपिलदेव शास्त्री—

उत्तरप्रदेश कालेज शिक्षा सेवा से निवृत्त डा० कपिलदेव शास्त्री गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के कुलपति हैं। आपने वेद विषयक अनेक उत्तम ग्रन्थ लिखे हैं।

३०. डा० हर्षनारायण—

लखनऊ निवासी दर्शन-शास्त्र के अवकाशप्राप्त प्राध्यापक हैं।

३१. पं० विशुद्धानन्द मिश्र—

बदायूं निवासी पं० विशुद्धानन्द शास्त्री संस्कृत के उद्भट विद्वान्

हैं। स्वामी करपात्री के तत्वावधान में लिखित वेदार्थ पारिजात का सटीक उत्तर शास्त्री जी ने वेदार्थ कल्पद्रुम शीर्षक से दिया है। संस्कृत के आशु कवि तथा धारावाही वक्ता हैं।

३२. श्री रामनिवास विद्यार्थी—

फजलपुर (मेरठ) के निवासी हैं। आपने सामवेद के मन्त्रों का पद्यानुवाद किया है। व्यवसाय से अध्यापक श्री विद्यार्थी एक उत्कृष्ट कवि हैं।

३३ सुरेन्द्रकुमार शास्त्री—

श्री शास्त्री की यह कविता आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली की स्मारिका में प्रकाशित हुई है।

३४. पं० योगेन्द्र आर्य—

गुरुकुल झज्जर के भूतपूर्व विद्यार्थी योगेन्द्र आर्य ने सम्प्रति संन्यास ले लिया है। 'चतुर्वेद संहिताओं में योग' विषय पर आपने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से पी-एच०डी० की उपाधि भी ग्रहण की है।

३५. डा० नरदेव शास्त्री—

संस्कृत व्याकरण के अप्रतिम विद्वान् डा० नरदेव शास्त्री सम्प्रति हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला में संस्कृत के प्राध्यापक हैं। आप संस्कृत प्रचारकम् के अवैतनिक सम्पादक भी हैं।

३६. पं० केशवप्रसाद उपाध्याय—

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के मुखपत्र मासिक भारतोदय के सम्पादक हैं।

३७. पं० रमाशंकर शास्त्री—

अजमेर निवासी पं० रमाशंकर शास्त्री दयानन्द विद्यालय अजमेर में अनेक वर्षों तक संस्कृत पढ़ाते रहे। आपने सत्यार्थप्रकाश के अनेक समुल्लासों का संस्कृत पद्यानुवाद भी किया है।

३८. डा० जयदत्त शास्त्री उप्रेती—

कुमाऊं विश्वविद्यालय, अलमोड़ा में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डा० उप्रेती वेदों के अद्वितीय विद्वान् हैं। "वेद में इन्द्र" विषयक उनका विद्वत्तापूर्ण शोध प्रबन्ध प्रकाशित हो चुका है।

३९. पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी—

गुरुकुल वृन्दावन के पुराने स्नातक पं० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी विगत कई वर्षों से अजमेर में रहकर वैद्यक कार्य में संलग्न हैं। संस्कृत के विद्वान् उत्तम वक्ता तथा कवि भी हैं।

o——o

हमारे प्रमुख प्रकाशन

१. व्याकरणमहाभाष्यम् (प्रदीप, उद्योत, विमर्श सहित)	५००.००
२. काशिका	४५.००
३. अष्टाध्यायी (मूल)	५.००
४. कारिकाप्रकाश	४.००
५. लिंगानुशासनवृत्ति	३.२५
६. फिट्सूत्रप्रदीपः	३.००
७. छन्दःशास्त्रम्	१०.००
८. काव्यालंकारसूत्राणि	४.००
९. निरुक्तहिन्दीभाष्य (दो भाग)	६०.००
१०. योगार्यभाष्य	६-००
११. सांख्यार्य भाष्य	३०.००
१२. मीमांसार्यभाष्य (१-३ भाग)	१३०.००
१३. कुलियात आर्यमुसाफिर (१-२)	६०-०
१४. भारतेतिहासः	५.००
१५. दयानन्दलहरी	२.००
१६. विरजानन्दचरितम्	२.५०
१७. नारायणस्वामिचरितम्	.७५
१८. ब्रह्मचर्यशतकम्	.६५
१९. गुरुकुलशतकम्	.५०
२०. ब्रह्मचर्यमहत्त्वम्	.५०
२१. चारुचरितामृतम्	१.००
२२. बस्तीराम अग्निबाण	२.५०
२३. महर्षि दयानन्द जीवनकथा	२.००
२४. असली अमृत गीता (१-२)	१.५०
२५. बस्तीराम रहस्य	१.५०
२६. मानस दीपिका	३.००
२७. पाखण्ड खण्डनी	४.००
२८. पोप की नाखर	.४५
२९. आत्मानन्द जीवन ज्योति	१६.००
३०. मनोविज्ञान शिवसंकल्प	१०.००
३१. कन्या और ब्रह्मचर्य	.८०
३२. जीवात्मा अणुः विभुर्वा	१.५०
३३. बलिदान	१००.००
३४. ईशोपनिषद् व्याख्या	.७५
३५. सामयिक समाधान	.५०
३६. जीव का परिमाण	.७५
३७. तत्त्वबोध	१.००
३८. वेद-प्रवेश (१-२ भाग)	२-५०
३९. गीताविवेक	८.००
४०. स्वस्थवृत्तम्	५.००
४१. वेदविमर्श (भाग-१)	२.००
४२. आसनों के व्यायाम	३.००
४३. सत्यार्थप्रकाश	१०१.००
४४. संस्कृत प्रबोध	१.५०
४५. घर का वैद्य (१-३ भाग)	१३.००
४६. सुखी जीवन	४.००
४७. दैनन्दिनी	३.००
४८. महापुरुषों के संग में	४.००
४९. न्यायार्य भाष्य	५०.००
५०. वेदान्तार्य भाष्य	६०.००
५१. वैशेषिकार्य भाष्य	४०.००
५२. उपनिषत्समुच्चय	५०.००
५३. वैदिक भारत में यज्ञ	२.००
५४. ओमानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	१००.००
५५. ओ३म् गीतांजलि	२.५०
५६. सामवेद पदसंहिता	२५.००

प्रकाशक—हरयाणा साहित्य संस्थान, पोस्ट गुरुकुल झज्जर, रोहतक